UNIVERSAL LIBRARY
OU_178824
UNIVERSAL LIBRARY

–556—13-7-71—4,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

H 3872

No. H 83/T12 b Accession No.

or

ook should be returned on or before the date last marked below.

OUP 552—7-7 '66—1

उजड़ा घर

रवीन्द्र विश्व-ख्याति के महान कलाकार हैं। वे अकेले भारतीय साहित्यकार हैं जिन्हें नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनके उपन्यास भी साहित्य में विशेष स्थान रखते हैं।

'उजड़ा घर' रविबाबू के उत्कृष्ट लघु उपन्यास 'नष्ट नीड़' का हिन्दी अनुवाद है। इसमें अमल, चारु और भूपति जैसे चरित्रों के माध्यम से स्त्री-पुरुष-सम्बन्धों का बहुत ही यथार्थ किन्तु मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया गया है। इसके अनुवादक हैं श्री धन्यकुमार जैन।

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटिड
जी० टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली-३२

उजड़ा घर

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अनुवादक
धन्यकुमार जैन

दूसरा संस्करण

UJRA GHAR: NOVEL
RAVINDRA NATH THAKUR
मूल्य : एक रुपया

उजड़ा घर

असल में भूपति अगर कोई काम न भी करते, तो भी उनका काम चल सकता था। कारण, उनके पास काफी पैसा था, और देश भी गरम ठहरा। किन्तु ग्रह का फेर कि वे 'काम के आदमी' होकर पैदा हुए थे। और इसलिए उन्हें एक अंग्रेज़ी अखबार निकालना ही पड़ा। उसके बाद फिर उन्हें समय की लम्बाई पर कभी भी विलाप नहीं करना पड़ा।

बचपन से ही उन्हें अंग्रेज़ी लिखने और व्याख्यान देने का शौक था। कोई ज़रूरत न होने पर भी वे अंग्रेज़ी अखबारों के लिए चिट्ठियां लिखा करते थे, और कुछ वक्तव्य न होने पर भी सभा-समितियों में जा-जाकर व्याख्यान दिया करते थे। उन जैसे धनी आदमी को अपने दल में पाने की गरज़ से राजनीतिक दलपतियों ने भी भूपति की तारीफ करने में कोई कसर नहीं रखी। फल यह हुआ कि अपनी अंग्रेज़ी रचना-शक्ति के विषय में उनकी धारणा को यथेष्ट पोषण मिलता रहा।

अन्त में, उनके सम्बन्धी उमापति भी अपनी वकालत

छोड़कर बहनोई की सहायता करने आ गए। बोले, "तुम एक अंग्रेज़ी अखबार निकालो । तुम्हारी ऐसी असाधारण लेखनी है···" इत्यादि-इत्यादि।

भूपति बाबू अत्यन्त उत्साहित हो उठे। सोचा कि दूसरों के पत्रों में पत्र प्रकाशित कराने में कोई गौरव नहीं। अपने पत्र में स्वाधीन लेखनी अबाध गति से पूरी तेज़ी के साथ दौड़ सकती है। और, इसके कुछ ही दिन बाद देखा गया कि सम्बन्धी साहब पत्र के सहकारी सम्पादक बने हुए हैं और बहनोई साहब बहुत ही कम उमर में प्रधान सम्पादक की गद्दी पर विराजमान हैं।

खास कर कम उमर में सम्पादकीय नशा और राजनीतिक नशा बहुत ज़ोर करते हैं, उसपर भूपति को 'जोश पर चढ़ाकर उत्साह देनेवाले' भी काफी मिल गए। इस तरह, भूपति तो पत्र के नशे में चूर हो रहे थे, और उधर उनकी बालिका वधू श्रीमती चारुलता धीरे-धीरे यौवन की ओर कदम बढ़ा रही थी। संवादपत्र के सम्पादक को इस ज़रूरी संवाद का पता तक न था ! वे तब, भारत सरकार की सीमान्त-नीति किस तरह धीरे-धीरे बढ़ती हुई संयम की सीमा लांघ रही है, इस विषय में अपना मतामत प्रकट करने में व्यस्त थे।

पति के पास पैसा काफी था, लिहाज़ा चारुलता को घर का कोई काम-काज नहीं करना पड़ता था। उसके चेष्टाहीन जीवन का एकमात्र कार्य ही यह था कि परि-

पूर्ण अनावश्यकता के बीच फल न देनेवाले फूल की तरह दिन-रात केवल खिलते ही रहना। उसके किसी बात की कमी नहीं थी, और इसीलिए उसके हंसी-खेल में कहीं कोई विराम नहीं था। और ऐसी हालत में, मौका पाते ही कुलवधुएं अपने पति के विषय में बहुत-कुछ ज़्यादती करने लगती हैं, साथ ही दाम्पत्य-लीला की सीमान्त-नीति घर-गृहस्थी की सीमा लांघकर समय से असमय में और विहित से अविहित में पहुंच जाती है। किन्तु चारुलता को वह मौका भी नहीं मिला। अखबार की चहारदीवारी तोड़कर पति पर अधिकार करना उसके लिए कठिन हो गया।

युवती स्त्री की तरफ ध्यान आकर्षित करके रिश्ते में बड़ी किसी बड़ी-बूढ़ी ने जब भूपति को फटकारा, तो सचेत होकर उन्होंने कहा, "तब तो चारु के पास किसी सहेली का रहना ज़रूरी है; अकेली बेचारी क्या करे बैठी-बैठी!" इसी सिलसिले में एक दिन उमापति से उन्होंने कहा, "तुम अपनी स्त्री को यहां ले आओ न! बराबर की कोई स्त्री पास नहीं, ज़रूर चारु को सूना-सा लगता होगा।"

'स्त्री-संग का अभाव' ही चारु के लिए अत्यन्त दुःखदायी है, बस इतना ही सम्पादक की समझ में आया; और अपनी सरहज मन्दाकिनी को अपने घर लाकर बेचारे निश्चिन्त भी हो गए।

पति-पत्नी प्रेमोन्मेष के प्रथम अरुणालोक में, जबकि परस्पर एक-दूसरे को अपूर्व महिमा से चिरनवीन समझने लगते हैं, दाम्पत्य-जीवन का वह स्वर्णप्रभा से मण्डित उषाकाल अचेतन अवस्था में कब विदा लेकर चला जाता है, किसीको मालूम ही नहीं पड़ता। इस नव-दम्पति के जीवन में भी ठीक वैसा ही हुआ। नवीनता का आस्वाद पाने के पहले ही दोनों एक-दूसरे के लिए पुराने परिचित और अभ्यस्त हो गए।

चारुलता का पढ़ने-लिखने की तरफ एक स्वाभाविक आकर्षण था, इसलिए दिन उसके बोझ नहीं बने। उसने अपनी कोशिश और नाना कौशलों से पढ़ने-लिखने का इन्तज़ाम कर लिया था। भूपति का एक फुफेरा भाई अमल थर्डईयर में पढ़ता था। चारु उससे पढ़ लिया करती थी, और इतने से काम के बदले में उसे अमल की कुछ ज़्यादतियां भी सह लेनी पड़ती थीं। अक्सर उसे अमल को अंग्रेज़ी होटल में खाना खाने और अंग्रेज़ी किताबें खरीदने का खर्च देना पड़ता था। इसके अलावा, अमल कभी-कभी अपने मित्रों को भी निमन्त्रित करके खिलाता-पिलाता था, और उस यज्ञ का सारा भार गुरु-दक्षिणा के तौर पर चारुलता को ही उठाना पड़ता था। पति भूपति की तरफ से पत्नी चारुलता पर किसी तरह की 'मांग' का भार नहीं था। किन्तु पति का फुफेरा भाई अमल उसे ज़रा-सा पढ़ाकर इतनी ज़्यादा फरमाइशें पेश किया करता कि

जिसकी हद नहीं। इसपर चारुलता कभी-कभी बनावटी गुस्सा और विद्रोह का भाव भी दिखाया करती, किन्तु उसका कुछ भी नतीजा नहीं निकलता; क्योंकि किसी एक आदमी के किसी काम में आना और स्नेह के नाना उत्पात सहना उसके लिए बहुत ज़रूरी हो गया था।

एक दिन की बात है। अमल ने कहा, "भाभी, हमारे कालेज में एक राजा का दामाद पढ़ता है, और वह राजा के खास रनवास में खास हाथ से बुने हुए कारपेट के जूते पहन के आता है,—मुझसे तो नहीं सहा जाता। भाभी, मुझे भी वैसे ही कारपेट के जूते चाहिए, नहीं तो मेरी पद-मर्यादा अब धूल में ही मिलनेवाली है, समझ लो!"

चारु ने कहा, "हां-हां, मैं यही जो किया करूं दिन-रात, मेरे और कोई काम थोड़े ही है, बैठी-बैठी तुम्हारे लिए जूते बुना करूं! दाम दिए देती हूं, बाज़ार से खरीद लेना।" अमल ने कहा, "सो नहीं होने का।"

चारु जूते का कारपेट बुनना नहीं जानती, और अमल के सामने वह इस बात को स्वीकार भी नहीं करना चाहती। जबकि खुद अमल चाहता है तो संसार में इस एकमात्र प्रार्थी की प्रार्थना को पूरी किए बिना भी वह कैसे रह सकती है! अमल जब कालेज चला जाता, चारु तब छिपे-छिपे खूब मन लगाकर कारपेट की सिलाई सीखा करती। अमल जब खुद जूते की बात बिलकुल

भूल चुका, तो एक दिन शाम को चारु ने उसे खास तौर से निमन्त्रण देकर बुलाया।

गरमियों के दिन थे। छत पर आसन बिछाकर अमल के लिए थाली परोसी गई। थाली पीतल के ढकने से ढकी हुई थी। अमल कालेज के कपड़े उतारकर हाथ-मुंह धोकर खूब फिट-फाट होकर ऊपर पहुंचा। आसन पर बैठते ही उसने थाली का ढक्कन उठाया, और खोलते ही देखा कि थाली में बहुत ही खूबसूरत पशमी कारपेट के नये जूते रखे हैं। इसपर चारु कहकहा मारकर हंस पड़ी।

जूते पाकर अमल की उमंगें और भी आगे बढ़ने लगीं। अब की गुलूबन्द चाहिए तो अब की रेशमी रूमाल के चारों तरफ फूलदार जाली लगा देनी होगी। एक दिन फरमाइश हुई कि बाहरवाले बैठने-उठने के कमरे में उसकी जो आरामकुरसी है उसपर तेल का दाग लग गया है, उसपर चढ़ाने के लिए रेशमी वेल-बूटेदार गिलाफ चाहिए।

हर बार चारु उसकी फरमाइश का विरोध करके कलह करती और हर बार बड़े जतन और स्नेह के साथ शौकीन अमल का शौक पूरा कर देती। अमल बीच-बीच में कभी-कभी पूछ भी लिया करता, "भाभी, कितना और बाकी है ?" चारु झूठमूठ को कह देती, "अभी तो शुरू ही नहीं किया।" और कभी कहती, "मुझे उसकी याद ही नहीं रही।"

किन्तु अमल कब छोड़नेवाला था ! रोज़ याद दिला देता और मचलता रहता। हाथ धोकर पीछे पड़नेवाले अमल के मन में उत्पात का उद्रेक करा देने के लिए ही चारु अपनी उदासीनता दिखाकर विरोध पैदा करती, और फिर सहसा एक दिन उसकी प्रार्थना पूरी करके कौतुक देखा करती।

धनाढ्य पति के घर चारु को और किसीके लिए कुछ नहीं करना पड़ता। सिर्फ एक अमल ही ऐसा है जो उससे काम कराए बगैर नहीं मानता। किन्तु कुछ भी हो, इसमें सन्देह नहीं कि इन्हीं सब छोटे-छोटे शौक के कामों से ही चारुलता की हृदयवृत्ति चरितार्थ होती थी।

भूपति के अंत:पुर में जो थोड़ी-सी ज़मीन खाली पड़ी थी उसे यदि बगीचा कहा जाए, तो ज़रा कुछ अत्युक्ति ही होगी। उस बगीचे में मुख्य वनस्पति में था विलायती आमड़े का एक पेड़। बगीचे की तरक्की के लिए चारु और अमल ने आपस में एक कमेटी बना ली है। कुछ दिनों से दोनों मिलकर कागज़ पर चित्र और नक्शा बनाकर बड़े उत्साह से बगीचे की कल्पना प्रतिफलित कर रहे हैं।

अमल ने कहा, "भाभी, हमारे इस बगीचे में प्राचीन-काल की राजकुमारी की तरह तुम्हें अपने हाथ से पेड़ों को पानी देना पड़ेगा।"

चारु ने कहा, "और पीछे के उस कोने में एक झोंपड़ी बनानी होगी, जिसमें हिरण के बच्चे रहेंगे।"

अमल बोला, "और, एक छोटी-सी झील भी बनानी होगी, जिसमें हंस तैरा करेंगे।"

चारु ने इस प्रस्ताव पर उत्साहित होकर कहा, "और मैं उसमें नील कमल लगाऊंगी, बहुत दिनों से मुझे नील कमल देखने की साध है।"

अमल बोला, "उस झील पर एक पुल बांधा जाएगा, और उसके घाट पर छोटी-सी एक नाव बंधी रहा करेगी।"

चारु ने कहा, "घाट सफेद संगमरमर का होगा।"

अमल ने कागज़-पेंसिल लेकर, रूल खींचकर, 'कम्पास' की मदद से बड़े आडम्बर के साथ बगीचे का एक नक्शा बना डाला। इसके बाद दोनों मिलकर प्रति-दिन कल्पनाओं का संशोधन और परिवर्तन करने लगे; और इस तरह और भी बीस-पच्चीस नये नक्शे तैयार हो गए।

'मैप' बन जाने पर खर्चे का 'एस्टिमेट' बनने लगा। पहले तय हुआ था कि चारु अपने हाथ खर्च के रुपयों में से धीरे-धीरे बगीचा बनवाएगी। भूपति को तो 'घर में कहां क्या हो रहा है' कुछ पता ही नहीं रहता। चारु ने सोचा कि बगीचा बन जाने पर वहां पति को निमन्त्रित करके वह उन्हें अचरज में डाल देगी। भूपति सोचेंगे कि ज़रूर अलादीन के चिराग की सहायता से जापान देश से पूरा बगीचे का बगीचा उड़ा लाया गया है !

किन्तु 'एस्टिमेट' काफी किफायतशारी के साथ बनाया

जाने पर भी चारु को वह पसन्द नहीं आया। इतने रुपये वह लाएगी कहां से ? लिहाज़ा अमल ने फिर एक नक्शा बनाया, और उसमें बहुत कुछ उलट-फेर किया गया।

अमल ने कहा, "तो एक काम किया जाए, भाभी, झील अभी रहने दो, पीछे देखा जाएगा। क्यों, ठीक है न ?"

चारु ने कहा, "नहीं, नहीं, झील ही नहीं रही तो फिर रहा क्या! हमारा नील कमल तो उसीमें रहेगा !"

अमल ने कहा, "तो फिर हिरण की कुटिया की टाली की छत जाने दो, उसे ऐसे ही फूंस से छा देने से काम चल जाएगा।"

इसपर चारु को गुस्सा आ गया, उसने कहा, "तो जाने दो, मुझे उस घर की ज़रूरत नहीं।"

पहले मारीशस से लौंग, कर्नाटक से चन्दन और सिंहल से दारचीनी के पौधे मंगाने की बात हुई थी। अमल ने उसके बदले मानिक तल्ले के बगीचे से मामूली देशी और विलायती पौधे मंगाने के लिए कहा, तो चारु मुंह फुलाकर बैठ गई, बोली, "तो रहने दो, मुझे बगीचा नहीं चाहिए।"

सभी जानते हैं कि 'एस्टिमेट' घटाने का यह सही तरीका नहीं है। किन्तु 'एस्टिमेट' के साथ-साथ कल्पनाओं को भी रौंदना चारु के लिए असाध्य है, और अमल मुंह से चाहे जो भी कुछ कहे, उसे भी यह अच्छा नहीं लग

सकता।

अमल ने कहा, "तो, भाभी, तुम भाई साहब से बगीचे के बारे में कहती क्यों नहीं, वे ज़रूर रुपये दे देंगे।"

चारु ने कहा, "नहीं, उनसे कहने से तो मज़ा ही जाता रहेगा। हम ही दोनों जने मिलकर बगीचा बनाएंगे। उनसे कहने से तो 'ईडन गार्डन' बनवा देंगे वे! तब फिर हमारे प्लैन का क्या होगा?"

विलायती आमड़े के पेड़ की छाया तले बैठे हुए चारु और अमल दोनों जने असाध्य संकल्प के कल्पना-सुख में गोते लगा रहे थे। इतने में चारु की भौजाई मन्दाकिनी ने दुमंज़िले से पुकारकर कहा, "इतनी अबेर हो गई, तुम लोग क्या कर रहे हो बगीचे में?"

चारु ने जवाब दिया, "पके आमड़े ढूंढ़ रही हूं।"

खटाई की लालचिन मन्दा ने कहा, "मिलें तो मेरे लिए भी लेती आना।"

चारु हंसने लगी, और अमल भी हंस दिया। उन दोनों के संकल्पों में प्रधान आनन्द और गौरव यह था कि वे उन्हीं दोनों में आबद्ध थे। मन्दाकिनी में और चाहे जो भी गुण हों, पर कल्पना नहीं थी; वह इन सब बातों में रस कहां से लेती? इसलिए वह इनकी सब तरह की कमेटियों से बिलकुल न्यारी थी।

असाध्य भावी बगीचे का न तो एस्टिमेट ही घटा और न कल्पना ने किसी अंश में हार ही मानी। लिहाज़ा कुछ

दिनों तक आमड़े के पेड़ के नीचे बार-बार कमेटी बैठती रही। बगीचे में जहां झील खुदेगी, जहां हिरण की कुटिया छवेगी, जहां पत्थर की वेदी बनेगी, अमल ने उन सब स्थानों पर लाल निशान लगा दिए !

उस दिन, बगीचे में आमड़े के पेड़ के नीचे कहां किस ढंग का चबूतरा बनाया जाएगा, अमल उसके चारों तरफ कुदाली से निशान बना रहा था, इतने में चारु आकर पेड़ की छाया में बैठ गई, और बोली, "अमल, तुम्हें अगर लिखना आता, तो बहुत अच्छा होता।" अमल ने पूछा, "क्यों अच्छा होता ?"

चारु ने कहा, "तो मैं अपने इस बगीचे का वर्णन कराके तुमसे एक कहानी लिखाती। यह झील, हिरण की कुटिया, आमड़े का पेड़, सब कुछ रहता उसमें। हम दोनों के सिवा और कोई कुछ समझ ही नहीं पाता उसे, बड़ा मज़ा होता ! एक बार लिखने की कोशिश करो न तुम, ज़रूर लिख सकोगे तुम।"

अमल ने कहा, "अच्छा, अगर लिख सका तो तुम मुझे क्या दोगी ?"

चारु—क्या चाहते हो तुम ?

अमल—मैं अपनी मसहरी के चंदोए पर पेंसिल से फूल और लताएं बना दूंगा, तुम्हें उसपर रेशम का काम कर देना होगा।

चारु—यही तो तुम्हारी ज्यादती है ! मसहरी के

चंदोए पर कहीं फूल-पत्तियों का काम होता है!

मसहरी जैसी चीज़ को सौन्दर्यहीन कारागार बना रखने के विरुद्ध अमल ने बहुत-सी युक्तियां पेश कीं; और अन्त में कहा, "संसार में पन्द्रह आना आदमी ऐसे हैं जिन्हें सौन्दर्य का रत्ती-भर भी ज्ञान नहीं। असुन्दरता उन्हें खटकती ही नहीं, यह प्रमाण है उसका।"

चारु ने उसी क्षण मन ही मन यह बात मान ली; और यह जानकर वह खुश भी हुई कि उन दोनों की एकांत कमेटी संसार के पन्द्रह आना आदमियों से अलग है। उसने कहा, "अच्छी बात है, मैं मसहरी का चंदोआ बना दूंगी। तुम लिखो तो सही।" अमल ने रहस्यपूर्ण भाव से कहा, "तुम क्या समझती हो कि मैं लिख ही नहीं सकता?" चारु उत्तेजित हो उठी, बोली, "तो ज़रूर तुमने कुछ लिखा है! मुझे नहीं दिखाओगे तो?" अमल बोला, "आज रहने दो, भाभी।" चारु ने कहा, "नहीं, आज ही दिखाना होगा। तुम्हें मेरी सौगन्ध है, जाओ अपनी कापी ले आओ।"

असल में चारु को अपनी रचना सुनाने की तीव्र व्यग्रता ही अमल को अब तक रोके हुए थी। उसे दुविधा थी कि कहीं चारु की समझ में न आया तो? उसे अच्छी न लगी तो? और इस संकोच को वह दूर नहीं कर सकता था। आज, कापी लाकर, ज़रा सुर्ख होकर, ज़रा खांस-खखारकर, उसने पढ़ना शुरू किया। और चारु पेड़

के तने के सहारे बैठकर, घास पर पैर पसारे सुनने लगी। शीर्षक था 'मेरी कापी'। अमल ने लिखा था, "हे मेरी शुभ्र कापी, कल्पनाओं ने अभी तक तुम्हारा स्पर्श नहीं किया। सूतिका-गृह में भाग्यपुरुष के प्रवेश करने के पहले के शिशु के ललाटपट की तरह तुम निर्मल हो, तुम रहस्यमयी हो! जिस दिन तुम्हारे अन्तिम पृष्ठ का अन्तिम पंक्ति में उपसंहार लिखूंगा वह दिन आज कहां है? तुम्हारे शिशु-पत्र ये चिरकाल के लिए मसि-चिह्नित उस समाप्ति की आज स्वप्न में भी कल्पना नहीं कर रहे।" इत्यादि इत्यादि।

चारु पेड़ की छाया में बैठी स्तब्ध होकर सब सुन रही थी। पढ़ना खतम होने पर कुछ देर चुप रहकर वह बोली, "तुम लिख नहीं सकते क्यों!"

उस दिन उस पेड़ के नीचे अमल ने पहले-पहल साहित्य का मादक रस पान किया। साकी थी नवीना, रसना भी थी नवीन; और तीसरे पहर की सूर्यरश्मि दीर्घ छाया पात से रहस्यमयी होती जा रही थी।

चारु ने कहा, "अमल, थोड़े से आमड़े ले चलने होंगे। नहीं तो, मन्दा को कैफियत क्या दूंगी?" मूढ़ मन्दा के सामने ये सब साहित्यिक बातें कहने की प्रवृत्ति ही नहीं होती, इसलिए उसके लिए इन्हें आमड़े तोड़कर ले जाने पड़े।

२

भावी बगीचे का संकल्प, उनके अन्यान्य अनेक संकल्पों की तरह, सीमाहीन कल्पना-क्षेत्र में कब कहां खो गया, अमल और चारु दोनों में से किसीको कुछ मालूम ही नहीं पड़ा। और अब अमल की रचनाएं ही उन दोनों की आलोचना और परामर्श का प्रधान विषय बन गईं। अमल आकर कहता, "भाभी, एक बहुत ही अच्छा भाव दिमाग में आया है!" चारु उत्साहित हो उठती और तुरत कहती, "चलो अपने दक्षिण के बरामदे में, वहीं सुनूंगी, यहां अभी मंदा पान लगाने आ जाएगी।"

चारु कश्मीरी बरामदे में एक पुरानी बेंत की आराम-कुर्सी पर बैठ जाती, और अमल रेलिंग के नीचेवाले ऊंचे हिस्से पर बैठकर पैर फैला देता।

अमल के लिखने के विषय अक्सर सुनिर्दिष्ट नहीं होते, लिहाज़ा कोई बात स्पष्ट करके कहना उसके लिए कठिन था। अनेक विषयों की खिचड़ी पकाकर वह जो भी कुछ कहता, उसे साफ-साफ समझ लेना किसीके भी बूते की बात नहीं। अमल खुद ही बार-बार कहता रहता, "भाभी, मैं तुम्हें अच्छी तरह समझा नहीं सकता।" चारु कहती, "नहीं, मैं बहुत कुछ समझ रही हूं। तुम इसे पूरा लिख डालो, देर न करो।"

चारु कुछ समझकर और कुछ बिना समझे, बहुत कुछ

कल्पना करके और बहुत कुछ अमल के व्यक्त करने के आवेग से उत्तेजित होकर मन ही मन न जाने ऐसी कौन-सी चीज़ बनाकर खड़ी कर लेती कि उससे उसे सुख मिलता, आराम मिलता और मारे आग्रह के वह अधीर हो उठती। और उसी दिन शाम को ही पूछ बैठती, "कहां तक लिख लिया ?" अमल कहता, "इतनी जल्दी कहीं लिखा जा सकता है !" चारु दूसरे दिन सवेरे फिर ज़रा कुछ नाराज़ी के स्वर में पूछती, "तुमने उसे पूरा लिखा नहीं अभी ?" अमल कहता, "ठहरो, और ज़रा सोच लेने दो।" चारु नाराज़ होकर कहती, "तो रहने दो।"

शाम को वही गुस्सा इकट्ठा हो-होकर जब बातचीत बन्द कराने की नौबत ला देता तब अमल रूमाल निकालने के बहाने जेब में से लिखे हुए कागज़ों का कुछ हिस्सा निकालता। उसी क्षण चारु का मौन भंग हो जाता, और कह उठती, "वो क्या है, लिख तो लिया है ! मुझसे झूठ ! नहीं दिखाओगे ?" अमल कहता, "अभी खतम नहीं हुआ। और थोड़ा-सा लिखकर पीछे सुनाऊंगा तुम्हें।" चारु कहती, "नहीं, अभी सुनाना होगा तुम्हें।"

अमल 'अभी सुनाने' के लिए ही व्यस्त रहता, पर चारु से कुछ देर तक छीना-झपटी कराए बिना वह सुनाना नहीं चाहता। थोड़ी छीना-झपटी के बाद अमल कागज़ हाथ में लेकर पन्ने ठीक कर लेता और फिर पेन्सिल से दो-एक संशोधन करता रहता। और तब तक, चारु पुल-

कित कुतूहल से, जल के भार से झुके हुए बादल की तरह उन कागज़ों पर बराबर झुकी ही रहती। और इस तरह अमल दो-चार पैराग्राफ जब जितना लिखता उतना ही उसे हाल की हाल चारु को सुना देना पड़ता। बिना लिखे हुए अवशिष्ट अंश का आलोचना और कल्पना के द्वारा मन्थन चलता रहता।

अब तक ये दोनों तरुणहृदय आकाश-कुसुम के चयन में ही उलझे हुए थे, किन्तु अब काव्य-कुसुम की खेती शुरू हो जाने से और सब बातें भूल गए।

एक दिन तीसरे पहर अमल कालेज से लौटा, तो उसकी जेब कुछ ज्यादा भारी-सी मालूम हुई। अमल जब घर में घुसा, तो चारु ने अन्तःपुर की खिड़की से उसकी जेब की पूर्णता देख ली। अमल और-और दिन कालेज से लौटकर घर के भीतर पहुंचने में देर नहीं करता, था; किन्तु आज वह अपनी भरी जेब लिए बाहर के कमरे में ही रह गया, जल्दी भीतर जाने का नाम तक न लिया। चारु ने अंतःपुर के सीमांत तक आकर कई बार चूड़ियां बजाईं, पर किसीने सुना ही नहीं। अंत में वह कुछ नाराज़ होकर अपने बरामदे में जा बैठी, और मन्मथ दत्त की एक किताब हाथ में लेकर पढ़ने की कोशिश करने लगी।

मन्मथ दत्त नवीन लेखक है। उसकी लेखन-शैली बहुत कुछ अमल के ढंग की है, और महज़ इसीलिए अमल

कभी उसकी प्रशंसा नहीं करता; बल्कि वह कभी-कभी चारु के सामने उसकी रचना को विकृत उच्चारण से पढ़-कर मज़ाक उड़ाया करता, और चारु उसके हाथ से किताब छीनकर अवज्ञा के साथ दूर फेंक दिया करती। किन्तु आज जब उसने अमल के पैरों की आहट सुनी, तो उसी मन्मथ का 'कलकण्ठ' काव्य उसने अपने मुंह के सामने रखकर गहरी दिलचस्पी के साथ पढ़ना शुरू कर दिया। अमल बरामदे में आया; किंतु चारु ने उसकी तरफ ज़रा भी ध्यान नहीं दिया।

अमल बोला, "भाभी, क्या पढ़ रही हो ?"

चारु को निरुत्तर देख अमल उसकी चौकी के पीछे आकर खड़ा हो गया; और पुस्तक का नाम पढ़कर बोला, "अच्छा ! मन्मथ का 'गलगण्ड' है !"

चारु ने कहा, "ओः हो, परेशान न करो, पढ़ने दो मुझे।"

पीठ के पास खड़ा-खड़ा अमल उसे व्यंग्य के स्वर में पढ़ने लगा, "मैं तृण हूं, क्षुद्र तृण ! भाई रक्ताम्वर राज-वेशधारी अशोक, मैं मात्र एक तृण हूं। मेरे फूल नहीं, मेरे छाया नहीं, अपना मस्तक मैं आकाश में नहीं उठा, सकता, वसन्त की कोयल मेरा आश्रय लेकर 'कुहू-कुहू' स्वर से जगत् को उन्मत्त नहीं करती, फिर भी, भाई अशोक, तुम अपनी उस पुष्पित सुउच्च शाखा से मेरी उपेक्षा न करो। तुम्हारे पांव पड़ता हूं, मैं तृण हूं, तो भी

मुझे तुम तुच्छ न समझो।" इतना अंश तो उसने पुस्तक से पढ़ा, और फिर वह अपनी तरफ से बना-बनाकर व्यंग्य की ध्वनि में कहने लगा, "मैं केलों की गहर हूं, भाई कद्दू! हे मेरे गृह-छप्पर-विहारी भाई कद्दू, मैं नितान्त ही कच्चे केले की गहर हूं।"

चारु कौतूहल के मारे नाराज़ न हो सकी, हंसके उठ बैठी; और किताब फेंककर बोली, "तुम बड़े ईर्ष्यालु हो, अपनी रचना के सिवा और किसीकी कोई भी चीज़ तुम्हें पसन्द नहीं आती।"

अमल ने कहा, "लेकिन तुम्हारी तो अपूर्व उदारता है! कहीं तृण भी मिल जाए तो तुम उसे तुरन्त निगल जाना चाहती हो!"

चारु—अच्छा महाशयजी, मज़ाक करने की ज़रूरत नहीं; जेब में क्या है सो जल्दी निकालिए।

अमल—अच्छा, तुम्हारा क्या अन्दाज़ है?

बहुत देर तक चारु को तंग करके अमल ने जेब में से 'सरोरुह' नामक प्रसिद्ध मासिक पत्र निकाला। चारु ने समझा कि ज़रूर इसमें अमल की वह 'मेरी कापी' नामक रचना प्रकाशित हुई होगी।

उसे देखकर वह चुप रही। अमल ने सोचा था कि भाभी बहुत खुश होंगी। लेकिन खुशी का विशेष कोई लक्षण न देखकर उसने कहा, "समझीं भाभी, 'सरोरुह' में कोई एरू-गैरू लेख नहीं निकलते!"

अमल कुछ ज़्यादा कह गया। असल में, किसी प्रकार चलने लायक लेख हाथ पड़ने पर सम्पादक उसे छापे बिना नहीं छोड़ते। परन्तु अमल ने चारु को समझा दिया कि 'सम्पादक बहुत ही कड़े आदमी हैं, सौ रचनाओं में से मुश्किल से एक प्रकाशन-योग्य समझकर छापते हैं।' सुनकर चारु खुश होने की कोशिश करने लगी, पर खुश न हो सकी। किस वजह से उसके मन में चोट पहुंची, इसे उसने समझ देखने की कोशिश की, किन्तु कोई संगत कारण न निकाल सकी।

अमल की रचना असल में अमल और चारु सिर्फ इन्हीं दोनों की सम्पत्ति है। अमल लेखक है और चारु पाठिका। इस गोपनता में ही उसका प्रधान रस है। उसकी रचनाओं को सभी कोई पढ़ें और बहुत-से लोग उनकी प्रशंसा करें, इसकी वेदना चारु को क्यों इतना दुःख दे रही थी सो वह अच्छी तरह समझ ही न सकी, किन्तु एक पाठक से तो लेखक की आकांक्षा ज़्यादा दिनों तक मिट नहीं सकती। अमल ने अपनी रचनाएं छपाना शुरू कर दिया, और प्रशंसा भी प्राप्त की।

बीच-बीच में भक्तों की चिट्ठियां भी आने लगीं, और अमल उन्हें अपनी भाभी को दिखाता रहा। चारु उससे खुश भी होती और दुःखित भी। अब अमल को लिखने में प्रवृत्त होने के लिए एकमात्र चारु के ही उत्साह और उत्ते-जन की आवश्यकता नहीं रही। अमल को बीच-बीच में

कभी-कदा बिना नाम-धाम की रमणियों की चिट्ठियां भी मिलने लगीं। उनके लिए चारु उसका मज़ाक उड़ाती, पर आराम नहीं पाती। सहसा उनकी कमेटी के बन्द द्वार को खोलकर देश की पाठक-मण्डली उन दोनों के बीच आ खड़ी हुई, यह क्या बात !

भूपति ने एक दिन फुरसत मिलने पर बात के सिल-सिले में कहा, "अपना अमल इतना अच्छा लिख लेता है, सो मुझे मालूम ही न था !"

भूपति की प्रशंसा से चारु खुश हुई। अमल भूपति का आश्रित है; किन्तु अन्य आश्रितों से उसमें पार्थक्य है, यह बात पति के समझ लेने से चारु ने मानो गर्व का अनुभव किया। उसके मन का भाव यह था कि अमल को क्यों मैं इतना स्नेह और आदर करती हूं, सो इतने दिनों बाद तुम लोग समझे ! किन्तु मैं बहुत दिन पहले ही अमल को समझ गई थी। अमल किसीके लिए भी अवज्ञा का पात्र नहीं। चारु ने पूछा, "तुमने उसके लेख पढ़े हैं ?"

भूपति ने कहा, "हां, नहीं, ठीक पढ़े तो नहीं, समय ही कहां मिलता है ! पर अपना निशिकान्त पढ़के खूब तारीफ कर रहा था। वह साहित्यिक लेख अच्छा समझ लेता है।"

चारु एकान्त मन से यह चाहती थी कि भूपति के मन में अमल के प्रति एक सम्मान का भाव जाग उठे।

३

उमापति भूपति को अखबार के ग्राहकों को साल में कई तरह के उपहार देने की बात समझा रहा था, पर भूपति की समझ में यह किसी भी तरह आ नहीं रहा था कि उपहार से किस तरह नुकसान से बचकर लाभ हो सकता है।

चारु एक बार कमरे में घुसी, और उमापति को देखकर लौट गई। फिर कुछ देर बाद घूम-फिरकर कमरे में आई, तो उसने देखा कि दोनों जने किसी हिसाब के बारे में बहस कर रहे हैं। उमापति चारु का अधैर्य देखकर किसी बहाने से बाहर चला गया; और भूपति हिसाब में सर खपाने लगे।

चारु ने कमरे के भीतर आकर कहा, "अभी तक शायद तुम्हारा काम खतम नहीं हुआ। दिन-रात उसी एक अखबार को लेकर कैसे तुम्हारा समय कटता है, मैं यही सोचा करती हूं।"

भूपति ने हिसाब हटाकर रख दिया और ज़रा मुसकरा दिए। मन ही मन सोचने लगे, 'वास्तव में चारु की तरफ ध्यान देने का मुझे वक्त ही नहीं मिलता, यह बड़ा अन्याय है मेरा। इस बेचारी के पास समय बिताने का कुछ ज़रिया ही नहीं।' भूपति ने स्नेह-भरे स्वर में कहा, "आज तुम्हारी पढ़ाई बन्द है मालूम होता है। मास्टर

साहब शायद भागे हुए हैं ! तुम्हारी पाठशाला में सब उलटे नियम हैं। छात्रा पोथी-पत्रा लेकर तैयार है, मास्टर का पता नहीं ! आजकल अमल तुम्हें नियमित रूप से नहीं पढ़ाता क्या ?"

चारु ने कहा, "मुझे पढ़ाकर अमल का समय नष्ट करना क्या उचित है ? अमल को क्या तुमने एक मामूली प्राइवेट ट्यूटर समझ रखा है ?"

भूपति ने चारु की कमर पकड़कर अपनी ओर खींचते हुए कहा, "वह क्या मामूली प्राइवेट ट्यूटरी है ? तुम जैसी भाभी को मैं पढ़ा सकता तो···"

चारु बोली, "ओ-हो-हो ! बस रहने दो, तुम अब कुछ न कहो। पति होने पर ही यह हाल है; तो और कुछ···"

भूपति को ज़रा कुछ चोट पहुंची, वे बोले, "अच्छा, कल से मैं तुम्हें ज़रूर पढ़ाऊंगा। अपनी किताबें तो ले आओ ज़रा, क्या पढ़ती हो, देख लूं ज़रा।"

चारु—रहने भी दो, बहुत हो गया, तुम्हें अब पढ़ाने की ज़रूरत नहीं। कुछ देर के लिए अपने अखबार का हिसाब ज़रा रहने दोगे ? अभी तुम और किसी तरफ ध्यान दे सकोगे या नहीं, सो बताओ ?

भूपति—ज़रूर, ज़रूर ! इस वक्त तुम मेरे मन को जिस तरह घुमाना चाहो, घुमा सकती हो।

चारु—अच्छी बात है, तो अमल का यह लेख पढ़

देखो। कैसा अच्छा लिखा है ! सम्पादक ने अमल को लिखा है कि इस लेख को पढ़कर नवगोपाल बाबू ने उसे भारत का रस्किन बताया है।

सुनकर भूपति ने कुछ संकुचित भाव से अखबार हाथ में ले लिया। खोलकर देखा, लेख का नाम है 'आषाढ़ का चांद'।

पिछले दो हफ्ते से भूपति भारत सरकार के बजट की समालोचना करने के लिए बड़े-बड़े आंकड़े बना रहे थे। उसके अंक बहुत पैरोंवाले कीड़ों की तरह उनके दिमाग के अनेक छेदों में घूम-फिर रहे थे। ऐसे समय में सहसा देशी भाषा में लिखे हुए 'आषाढ़ का चांद' लेख आद्योपान्त पढ़ने के लिए उनका मन तैयार न था। और रचना भी छोटी न थी।

रचना का प्रारम्भ इस तरह था—"आषाढ़ का चांद, क्यों तू रात-रात-भर बादलों से इस तरह छुपा-छुपा फिरता है ? मानो स्वर्गलोक से तू कुछ चुरा लाया है, मानो अपना कलंक ढकने के लिए तुझे कहीं स्थान न मिल रहा हो ! फागुन के महीने में जब कि आकाश के किसी कोने में मुट्ठी-भर बादल नहीं थे, तब संसार की आंखों के सामने तू निर्लज्ज की तरह खुले आकाश में अपने को प्रकट किए हुए था और आज तेरी वही बिखरी हुई हंसी शिशु के स्वप्न की तरह, प्रिया की स्मृति की तरह, सुरेश्वरी शची के अलक-विलम्बित मुक्ताहार की

तरह···" इत्यादि ।

भूपति ने सिर खुजाते हुए कहा, "अच्छा लिखा है ! पर मुझे क्यों देती हो ? यह सब कवित्व की बातें मैं क्या समझूं !"

चारु ने संकुचित होकर भूपति के हाथ से पत्रिका छीन ली, बोली, "तो तुम क्या समझते हो ?" भूपति ने कहा, "मैं इस दुनिया का आदमी हूं, ज़्यादा से ज़्यादा मैं आदमी को समझता हूं ।"

चारु ने कहा, "आदमी की बात क्या साहित्य में नहीं लिखी रहती ?"

"गलत लिखी रहती है। इसके सिवा, जब कि आदमी सशरीर मौजूद है तो बनावटी बातों में उसे ढूंढ़ने से क्या फायदा ?" इतना कहकर भूपति चारुलता की ठोड़ी पकड़कर कहने लगे, "यही जैसे मैं तुम्हें समझता हूं, इसके लिए क्या 'मेघनाद-वध' या 'चण्डीदास' पढ़ने की ज़रूरत है ?"

भूपति को इस बात का अभिमान था कि वे काव्य नहीं समझते। फिर भी अमल की रचनाओं पर, अच्छी तरह बगैर पढ़े ही, उनकी श्रद्धा थी। भूपति सोचते कि कहने की बात कुछ नहीं, फिर भी बना-बनाकर इतनी अनर्गल बातें कह डालना, ये तो मुझसे सिर धुन डालने पर भी न कही जातीं। अमल के भीतर इतनी शक्ति थी; सो कौन जानता था ?

भूपति अपनी रसज्ञता को अस्वीकार करते थे, किन्तु साहित्य के प्रति उनकी तरफ से कंजूसी नहीं थी। कोई निर्धन लेखक पुस्तक छपाने के लिए यदि उनसे सहायता मांगता, तो वे उसी वक्त और उदारता के साथ रुपये दे देते; और खास तौर से केवल इतना कह देते कि 'मुझे समर्पण न की जाए।' देश के छोटे-बड़े सभी साप्ताहिक और मासिक पत्र, प्रसिद्ध-अप्रसिद्ध, पाठ्य-अपाठ्य सभी तरह की किताबें वे खरीद लिया करते, और ज़िक्र छिड़ने पर कह दिया करते, "एक तो मैं पढ़ता नहीं, उस-पर अगर खरीदूं भी नहीं, तो पाप भी लगेगा और प्राय-श्चित्त भी न होगा।" वे खुद पढ़ते नहीं थे, इसीसे बुरी किताबों के प्रति उनका रत्ती-भर भी विद्वेष नहीं था। यही वजह है कि उनकी लाइब्रेरी देशी पुस्तकों से भरी पड़ी थी।

अमल भूपति को अंग्रेज़ी प्रूफ देखने में सहायता करता था। किसी एक कापी की दुर्बोध्य लिपि दिखाने के लिए वह कापियों का एक बण्डल लेकर उनके कमरे में घुसा। भूपति ने हंसते हुए कहा, "अमल, तुम 'असाढ़ के चांद' और 'भादों के पके ताड़' पर जितना चाहो लिखो, मुझे कोई आपत्ति नहीं, मैं किसीकी स्वाधीनता पर हस्त-क्षेप नहीं करना चाहता। परन्तु मेरी स्वाधीनता पर क्यों हस्तक्षेप किया जाता है? तुम्हारी भाभी मुझे तुम्हारी रच-नाएं बगैर पढ़ाए नहीं छोड़तीं, यह कैसा अत्याचार है!"

अमल ने हंसकर कहा, "यह क्या, भाभी! मेरी रचनाओं से तुम भाई साहब पर ज़ोर-ज़ुल्म करने की तरकीब निकाल लोगी, ऐसा जानता तो मैं कुछ लिखता ही नहीं।"

साहित्य-रस से विमुख भूपति के आगे लाकर उसकी अत्यन्त दर्द-भरी रचनाओं का अनादर कराने से अमल मन ही मन चारु पर नाराज़ ही हुआ, और चारु भी उसी वक्त इस बात को समझ जाने से व्यथित हुई, और बात को वह दूसरी तरफ घुमाने के लिए भूपति से बोली, "तुम अपने भइया का ब्याह तो करा दो देखूं, तब फिर लेख-वेख का उपद्रव नहीं सहना पड़ेगा।"

भूपति ने कहा, "आजकल के लड़के हमारे जैसे बेवकूफ नहीं हैं! उनका जितना कवित्व है सब लेखों में ही है, काम में वे खूब सयाने हैं! भला आज तक अपने देवर को तुम कौन-से ब्याह के लिए भी राज़ी करा सकीं?"

चारु के चले जाने पर भूपति ने अमल से कहा, "अमल, मुझे इस अखबार के बखेड़े में रहना पड़ता है; चारु बेचारी बड़ी अकेली-सी रहती है। कोई काम-धंधा भी नहीं, बीच-बीच में मेरे पास आती है और झांक-झूंककर चली जाती है। तुम उन्हें ज़रा पढ़ने-लिखने में लगाए रख सको तो अच्छा हो। बीच-बीच में अंग्रेज़ी काव्यों से कुछ अनुवाद करके सुनाया करो, तो उपकार भी हो और अच्छा भी लगे। चारु में साहित्यिक रुचि तो

काफी है।"

अमल बोला, "सो तो ठीक है। भाभी अगर और ज़रा पढ़-लिख लें, तो मेरा विश्वास है कि वे खुद बहुत अच्छा लिखने लगें।" भूपति ने हंसकर कहा, "इतनी आशा मैं नहीं करता। पर इतना ज़रूर है कि चारु आज-कल की साहित्यिक रचनाओं की अच्छाई-बुराई मुझसे ज़्यादा समझती है।" अमल ने कहा, "उनमें कल्पना-शक्ति काफी है। खासकर स्त्रियों में यह बात कम पाई जाती है।" भूपति बोले, "पुरुषों में भी कम पाई जाती है, इसका सबूत मैं हूं। अच्छा, तुम अगर अपनी भाभी को कुछ बना सको, तो मैं तुम्हें इनाम दूंगा।" अमल बोला, "क्या दोगे, बताओ न, भाई साहब?" भूपति ने कहा, "तुम्हारी भाभी के लिए एक देवरानी ढूंढ़ लाऊंगा कहीं से।" अमल हंस दिया, बोला, "फिर मुझे उसे बनाने में लग जाना पड़ेगा! सारी ज़िन्दगी क्या बनाने-बनाने में ही बिता दूंगा!"

दोनों भाई आधुनिक ठहरे, बात करने में सकुचाते नहीं।

४

पाठक समाज में नाम पैदा करके अमल ने अब अपना मस्तक पहले से बहुत ऊंचा कर लिया है। पहले वह

स्कूल के लड़के की तरह रहा करता था, पर अब मानो वह समाज का गण्यमान्य आदमी जैसा हो गया है। बीच-बीच में वह साहित्य-सभा में निबन्ध पढ़ा करता है। सम्पादक और सम्पादक के दूत उसके पास आया करते हैं, और उसे निमंत्रित करके खिलाते-पिलाते भी हैं। लोग उससे नाना सभाओं के सदस्य और सभापति बनने के लिए भी अनुरोध किया करते हैं। घर के नौकर-चाकर और आत्मीय-स्वजनों की दृष्टि में भी अब उसका सम्मान पहले से बहुत कुछ ऊंचा हो गया है। किन्तु मन्दाकिनी ने अब तक उसे कोई खास आदमी नहीं समझा। अमल और चारु के हास्यालाप और आलोचना को महज़ लड़कपन समझकर, उसकी उपेक्षा करके, वह पान लगाती और घर का काम-काज किया करती थी। साथ ही अपने को वह उन लोगों से श्रेष्ठ और गृहस्थी के लिए अधिक आवश्यक समझती थी। अमल के पान खाने की कोई हद न थी। मन्दाकिनी पर पान लगाने का भार होने से वह पानों की इस फज़ूलखर्ची से नाखुश रहती थी। चारु और अमल षड्यन्त्र करके मन्दा का पानों का भण्डार अक्सर लूट लिया करते थे, और अन्त में यह उनके मनोविनोद का एक ज़रिया हो गया था। किन्तु इन शौकीन लुटेरों का लूट-खसोट का मज़ाक मन्दा के लिए मनोरंजक न था।

असल में बात यह है कि एक आश्रित दूसरे आश्रित

को प्रसन्न दृष्टि से नहीं देख सकता। अमल के लिए मन्दा को जितना काम-काज करना पड़ता उससे मानो वह अपने को कुछ अपमानित-सी समझती। चारु अमल का पक्ष करती थी इसीलिए उससे मुंह खोलकर कुछ कहते नहीं बनता था; किन्तु अमल की लापरवाही करने की कोशिश वह हमेशा ही किया करती थी। और मौका मिलते ही दास-दासियों के आगे भी गुप्त रूप से अमल की बदनामी करने से नहीं चूकती थी; और वे भी उसमें भाग लिया करते थे।

किन्तु जब अमल का अभ्युत्थान शुरू हुआ तो मन्दा चौंकी। अमल अब वह अमल नहीं रहा! अब उसकी संकुचित नम्रता बिलकुल ही जाती रही, और दूसरों की अवज्ञा करने का हक भी मानो उसीके हाथ आ गया। संसार में प्रतिष्ठा प्राप्त करके जो पुरुप बिना संशय के निःसंकोच भाव से अपने को प्रकट कर सकता है और जिसने एक निश्चित अधिकार प्राप्त कर लिया है वह समर्थ पुरुष सहज ही नारी की दृष्टि आकर्षित कर सकता है। मन्दा ने जब देखा कि अमल चारों तरफ से श्रद्धा पा रहा है तब उसने भी अमल के ऊंचे मस्तक की ओर मुंह उठाकर देखा। अमल के तरुण चेहरे पर आई हुई नव गौरव की गर्वोज्ज्वल दीप्ति ने उसकी आंखों में एक तरह का मोह पैदा कर दिया; और तब अमल को मानो उसने नई तरह से देखा।

अब किसीको पान चुराने की ज़रूरत नहीं पड़ती। अमल के ख्याति-लाभ से चारु को इतना और नुकसान हुआ कि उन दोनों का षड्यन्त्र का कौतुक-बन्धन विच्छिन्न हो गया। पान अब अमल के आगे अपने-आप ही पहुंचने लगे, कभी कोई कमी नहीं पड़ती। इसके सिवा उन दोनों के गठित दल में जो 'मन्दा को नाना कौशलों से दूर रखने' का आनन्द था, उसके भी नष्ट होने की नौबत आ पहुंची। अब मन्दा को अलग रखना कठिन हो गया। अमल सिर्फ चारु को ही अपनी एकमात्र साथिन और समझदार समझे, यह बात मन्दा को अच्छी नहीं लगने लगी। इसके पहले, उन दोनों की तरफ से की जानेवाली उपेक्षा का अब वह मय ब्याज के बदला लेना चाहती है। लिहाज़ा अमल और चारु की भेंट-मुलाकात होते ही अब वह बीच में अपनी छाया डालकर उसपर 'ग्रहण' लगा देती है। सहसा मन्दा के इस परिवर्तन से चारु और अमल को हास-परिहास करने का मौका मिलना भी दुश्वार हो गया।

मन्दाकिनी का यह अनाहूत प्रवेश चारु को जितना अरुचिकर मालूम हुआ अमल को शायद उतना न भी मालूम हुआ हो। विमुख रमणी का मन क्रमशः उसकी तरफ झुक रहा है यह जानकर भीतर ही भीतर वह एक तरह का आग्रह अनुभव करने लगा। किन्तु चारु जब दूर से मन्दा को देखकर तीव्र मृदु स्वर से कहती, 'वो आ रही है!' तब अमल भी कह देता, 'आ गई क्या, परेशान कर

डाला !' संसार के और सबों के प्रति असहिष्णुता प्रकट करना इनका एक दस्तूर-सा था, अमल उसे अचानक कैसे छोड़ देता ? अन्त में मन्दा जब पास आ जाती तब मानो ज़बरदस्ती सौजन्य दिखाने के लिए वह कहता, "क्या खबर है, मन्दा भाभी ? आज अपने पानदान में चोरी-डकैती के कोई लक्षण देखे ?" मन्दा कहती, "जबकि चाहते ही पा जाते हो, लालाजी, तो चुराने की क्या ज़रूरत ?" अमल कहता, "मांगकर पाने की अपेक्षा उसमें आनन्द जो ज़्यादा है !" मन्दा कहती, "तुम लोग क्या पढ़ रहे थे, पढ़ो न ! रुक क्यों गए ? सुनने में मुझे अच्छा लगता है।"

इसके पहले मन्दा को पाठानुराग के लिए ख्याति प्राप्त करने की गरज़ कतई नहीं थी, किन्तु कालोहि बलवत्तरः !

चारु नहीं चाहती कि अरसिका मन्दा के सामने अमल कुछ पढ़े; किन्तु अमल की इच्छा रहती कि मन्दा भी उसकी रचना सुने। चारु कहती, "अमल ने 'कमलाकान्त के दफ्तर' की समालोचना लिखी है, सो क्या तुम्हारी कुछ समझ में आएगा ?" मन्दा कहती, "अरे मैं मूर्ख ही सही, तो क्या बिलकुल समझ ही नहीं सकती !"

इसपर और एक दिन की बात अमल को याद आ गई। चारु और मन्दा दोनों ताश खेल रही थीं। अमल अपनी रचना हाथ में लिए हुए खेल-सभा में दाखिल

हुआ। चारु को अपनी रचना सुनाने के लिए वह अधीर हो रहा था। खेल खतम न होते देख वह मन ही मन गुस्सा होने लगा। अन्त में उसने कहा, "तो तुम लोग खेलती रहो, भाभी, मैं अखिल बाबू को जाकर अपनी रचना सुना आऊं।" चारु ने अमल का दुपट्टा पकड़ा लिया, बोली, "उफ, बैठो न ज़रा, कहां जाते हो!" झटपट हारकर उसने खेल खतम कर दिया। मन्दा ने कहा, "तुम पढ़ना शुरू करोगे शायद, तो मैं उठूं।" चारु ने शराफत दिखाकर कहा, "क्यों, तुम भी सुनो न, भाभी!" मन्दा ने कहा, "नहीं बहन, मैं तुम लोगों का पढ़ना खाक-पत्थर कुछ समझती ही नहीं। मुझे तो नींद आने लगती है।" और वह असमय में खेल खतम हो जाने से दोनों पर नाराज़ होकर उठ गई।

और आज वही मन्दा 'कमलाकान्त' की समालोचना सुनने के लिए ऐसी उत्सुक है! अमल ने कहा, "यह तो बड़ी खुशी की बात है, भाभी, तुम सुनोगी, यह तो मेरा सौभाग्य है!" और फिर कापी के पन्ने उलटकर पढ़ने की तैयारी की। रचना के आरम्भ में ही उसने काफी रस उंडेला था, उतना हिस्सा छोड़ देने को उसका जी नहीं चाहा। इतने में चारु कह उठी, "लालाजी, तुमने तो कहा था कि जाह्नवी पुस्तकालय से कुछ पुराने मासिकपत्र ला दोगे?" अमल ने कहा, "आज नहीं।" चारु बोली, "आज ही तो! खूब रहे, भूल गए, क्यों!" अमल ने कहा, "भूल

क्यों जाऊंगा ? तुम्हींने तो कहा था···" चारु बोल उठी, "अच्छा-अच्छा, मत लाओ ! तुम लोग पढ़ो, मैं जाती हूं, पारस को लाइब्रेरी भेज दूं जाकर।" और वह उठ गई ।

अमल को विपत्ति की आशंका हुई। मन्दा मन ही मन समझ गई, और दूसरे ही क्षण चारु के प्रति उसका मन विषाक्त हो उठा। चारु के चले जाने पर अमल दुविधा में पड़ गया कि वह उठे या नहीं। इतने में मन्दा ने ज़रा कुछ हंसकर कहा, "जाओ, लालाजी, रूठी भाभी को मनाओ जाकर ! चारु गुस्सा हो गई है। मुझे लेख सुनाकर फजूल परेशानी में पड़ोगे !"

इसके बाद अमल के लिए उठना बहुत ही मुश्किल हो गया। अमल ने चारु से ज़रा रुष्ट होकर मन्दा से कहा, "क्यों, परेशानी काहे की ?" और पढ़ना शुरू कर दिया। मन्दा ने दोनों हाथों से उसकी कापी ढककर कहा, "ज़रूरत नहीं, लालाजी, मत पढ़ो।" और वह मानो आंसू रोकती हुई अन्यत्र चली गई।

५

चारु न्योता खाने गई थी। मन्दाकिनी घर में बैठी जूड़ा बांध रही थी। इतने में 'भाभी' कहता हुआ अमल भीतर चला आया। मन्दाकिनी निश्चित जानती थी कि चारु के

न्योते में जाने की बात अमल जानता ही होगा। वह हंसकर बोली, "अहा, अमल बाबू, किसकी खोज में आए थे और किससे भेंट हो गई! तुम्हारे भाग्य ही ऐसे हैं।"

अमल ने कहा, "गधे के लिए जैसी घास बाईं ओर की वैसी दाहिनी ओर की। दोनों समान आदरणीय हैं।" और वहीं बैठ गया। फिर थोड़ी देर बाद बोला, "मन्दा भाभी, तुम अपने देश की कोई कहानी कहो, मैं सुनूंगा।"

अमल लिखने का विषय चुनने के लिए सबकी सब बातें दिलचस्पी के साथ सुनने लगा था। इसलिए अब वह मन्दा की पहले की तरह उपेक्षा नहीं करता। मन्दा का मनस्तत्त्व और उसका इतिहास अब उसके लिए दिलचस्पी की चीज़ है। कहां उसकी जन्मभूमि है, कैसे उसका जीवन बीता है, कब उसका ब्याह हुआ था, इत्यादि सभी बातें वह ढूंढ़-ढूंढ़कर पूछने लगा। मन्दा के क्षुद्र जीवन-वृत्तान्त के सम्बन्ध में उसे इतना कुतूहल क्यों है, यह बात उसने प्रकट नहीं की; और मन्दा भी अपने आनन्द में अपनी सब बातें कहती ही चली जाने लगी। बीच-बीच में वह कहती भी जाती, "क्या बक रही हूं, कोई ठीक नहीं!" फिर भी रुकना नहीं चाहती। अमल भी उसे उत्साह देते हुए कहता, "नहीं, मुझे अच्छा लग रहा है, तुम कहती जाओ।"

मन्दा के पिता के यहां एक गुमाश्ता था। वह अपनी दूसरी स्त्री के साथ झगड़ा करके किसी-किसी दिन रूठकर

अनशन-व्रत धारण किया करता था। अन्त में भूख के मारे तंग आकर एक दिन वह मन्दा के घर किस तरह छिपकर खाने आया और अचानक स्त्री ने उसे कैसे पकड़ लिया, यह किस्सा चल रहा था और अमल दिलचस्पी के साथ सुनते-सुनते सकौतुक हंस रहा था। इतने में चारु आ गई। कहानी का सिलसिला टूट गया। चारु के आगमन से सहसा एक जमी हुई सभा भंग हो गई, और चारु को यह स्पष्ट भास गया।

अमल ने पूछा, "भाभी, इतनी जल्दी लौट जाईं जो?"

चारु ने कहा, "हूं! बहुत जल्दी लौट आई!" इतना कहकर वह जा ही रही थी कि अमल बोल उठा, "अच्छा ही किया, बचा लिया मुझे। मैंने तो सोचा कि न जाने कब लौटोगी! मन्मथदत्त की 'सांझ की चिरैया' नई पुस्तक निकली है, तुम्हें सुनाने के लिए लाया हूं।" चारु ने कहा, "अभी रहने दो, मुझे काम है।" अमल बोला, "काम हो तो मुझे आज्ञा दो, मैं किए देता हूं।"

चारु जानती थी कि अमल आज मन्मथ की नई पुस्तक खरीद लाएगा, और उसे सुनाएगा। अमल के मन में ईर्ष्या जगाने के लिए उसने सोचा था कि वह उस रचना की खूब प्रशंसा करती जाएगी और अमल उसे विकृत करके पढ़-पढ़कर उसका मज़ाक उड़ाता जाएगा। इन्हीं सब बातों की कल्पना करके चारु अधैर्यवश निमंत्रण-

कारियों के अनुनय-विनय की परवाह न कर, अस्वस्थता का बहाना करके असमय में घर लौट आई थी। किन्तु घर आकर उसे ऐसा लगा कि वहां बड़े मज़े में थी, वहां से चला आना अन्याय हुआ। सोचने लगी, 'मन्दा भी तो कुछ कम बेहया नहीं ! एक ही घर में अकेली बैठी अमल के साथ दांत निकाल-निकालकर हंस रही है ! लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे ?' किन्तु इस बात पर मन्दा को फटकारना चारु के लिए बहुत कठिन था। कारण, मन्दा भी यदि ठीक वैसा ही दृष्टान्त देकर जवाब दे तो ? किन्तु उसकी और बात है, और मन्दा की और। वह अमल को लेख लिखने में उत्साह देती है, उसके साथ साहित्यिक आलोचना करती है; किन्तु मन्दा का तो यह उद्देश्य हो ही नहीं सकता। उसने सोचा कि 'मन्दा निःसन्देह इस सरल-हृदय युवक को मुग्ध करने के लिए जाल बिछा रही है।' और इस भयानक विपत्ति से अमल की रक्षा करना उसका कर्तव्य है। किन्तु अमल को इस मायाविनी का भीतरी अभिप्राय वह कैसे समझावे ? समझाने से कहीं उसका लोभ निवृत्त न होकर उलटा बढ़ गया तो ? फिर वह सोचने लगी, और भइया बेचारे ! वे तो उसके पति के अखबार के लिए ही दिन-रात मेहनत करते-करते मरे जा रहे हैं, और मन्दा का यह हाल कि एक कोने में बैठी अमल को लुभाने की सोच रही है ! भइया तो बिलकुल निश्चिन्त हैं। मन्दा पर उनका अथाह विश्वास है। इन

सब बातों को अपनी आंखों से देखकर भला वह कैसे स्थिर रह सकती है ? बड़ा अन्याय है यह ! किन्तु पहले तो अमल ऐसा नहीं था ! जब से लिखना शुरू करके नाम पैदा किया है तभी से यह सब अनर्थ दिखाई देने लगे हैं ! चारु ही तो उसके लिखने में मूल कारण है। न जाने किस कुमुहूर्त में उसने अमल को लिखने का उत्साह दिया था ! अब क्या अमल पर उसका पहले की तरह ज़ोर चलेगा ? अमल को अब और भी पांच जनों के आदर का स्वाद मिल गया है, इसलिए एक के घट जाने से उसका कुछ बना-बिगड़ता नहीं।

चारु साफ समझ गई कि उसके हाथ से निकलकर अन्य पांच जनों के हाथ पकड़कर अमल बड़ी आफत में फंस गया है। अब वह उसे ठीक अपना समकक्ष नहीं समझता। आज वह चारु से आगे बढ़ गया है। आज वह है 'लेखक' और चारु है 'पाठक' ! इसका प्रतिकार करना ही होगा उसे। सोचते-सोचते चारु का हृदय मानो अस्फुट स्वर में बोल उठा, 'ओह, सरल अमल ! मायाविनी मन्दा ! और बेचारे भइया !'

६

उस दिन आषाढ़ के नवीन मेघों से आकाश छा गया था। कमरे में अंधेरा घना हो आने से चारु अपनी खुली खिड़की

के पास बैठी सिर झुकाए कुछ लिख रही थी। अमल पीछे से कब दबे-पांव आकर खड़ा हो गया उसे नहीं मालूम। बदली के स्निग्ध प्रकाश में चारु लिखती गई, और अमल पढ़ता गया। उसके सामने स्वयं अमल की ही लिखी हुई दो-एक छपी हुई रचनाएं खुली पड़ी थीं। चारु के लिए वे ही उसकी रचना का एकमात्र आदर्श थीं।

"तुम तो कहती थीं कि तुम्हें लिखना आता ही नहीं !" ऐसे अचानक अमल का कण्ठस्वर सुनकर चारु एकाएक चौंक पड़ी; और चट से अपनी कापी छिपाकर बोली, "यह तुम बहुत ज़्यादती करते हो, अन्याय है यह तुम्हारा !"

अमल ने कहा, "इसमें अन्याय क्या हुआ ?"

चारु ने कहा, "छिपे-छिपे देख क्यों रहे थे !"

अमल ने जवाब दिया, "प्रकट रूप से देख नहीं पाता इसलिए।"

चारु अपनी रचना फाड़ फेंकना चाहती थी, किन्तु अमल ने चट से उसके हाथ से कापी छीन ली। चारु ने कहा, "अगर तुम इसे पढ़ोगे, तो तुमसे मेरी जनम-भर के लिए 'कुट्टी' हो जाएगी !"

अमल ने कहा, "अगर तुम मुझे पढ़ने की मनाही करोगी तो तुमसे मेरी ज़िन्दगी-भर के लिए 'कुट्टी' हो जाएगी !"

चारु ने कहा, "मेरे कण्ठ की सौगन्द है, लालाजी,

पढ़ना मत !"

अन्त में चारु को ही हार माननी पड़ी। कारण, अमल को अपनी रचना दिखाने के लिए भीतर से उसका जी फड़फड़ा रहा था। किन्तु दिखाते समय उसे इतनी लज्जा आएगी, यह उसने नहीं सोचा था। अमल ने जब बहुत अनुनय करने के बाद चारु की मौन सम्मति का लाभ उठाकर पढ़ना शुरू किया, तब चारु के हाथ-पैर बरफ-से ठंडे पड़ गए। वह बोली, "मैं ज़रा पान ले आऊं।" और चट से बगल के कमरे में पान लगाने चली गई।

अमल सब पढ़ चुकने के बाद चारु से जाकर बोला, "भाभी, लिखा तो तुमने बहुत अच्छा है !" चारु पान पर कत्था लगाना भूल गई, बोली, "चलो रहने दो, मज़ाक उड़ाने की ज़रूरत नहीं। दो, मेरी कापी दो।"

अमल बोला, "कापी अभी नहीं दूंगा, नकल करके इसे छपने भेजूंगा।"

चारु ने कहा, "हां, छपने तो ज़रूर भेजोगे ! सो नहीं होने का।"

चारु अपनी कापी पाने के लिए अमल के पीछे पड़ गई। किन्तु अमल ने भी किसी तरह पीछा नहीं छोड़ा। उसने जब बार-बार कसम खा-खाकर कहा कि 'यह तो किसी पत्र में भेजने लायक है', तब चारु ने मानो बिलकुल निराश होकर कहा, "तुमसे मैं जीत थोड़े ही सकती हूं !

जिस बात की मन में ठान लोगे उसे तुम बगैर पूरा किए नहीं छोड़ोगे। बड़े ज़िद्दी हो तुम, जाओ !"

अमल ने कहा, "इसे भाई साहब को भी एक बार दिखाना होगा।"

सुनते ही चारु पान लगाना छोड़कर जल्दी से उठ खड़ी हुई और कापी छीनने की कोशिश करती हुई बोली, "नहीं, उन्हें यह नहीं सुना सकते ! उनसे अगर मेरी लिखने की बात कही, तो मैं फिर कभी एक अक्षर भी न लिखूंगी।"

अमल ने कहा, "भाभी, तुम बड़ी भारी गलती कर रही हो। भाई साहब मुंह से चाहे जो भी कहें, तुम्हारी रचना देखकर वे ज़रूर खुश होंगे।"

चारु बोली, "होने दो खुश, मुझे खुशी की ज़रूरत नहीं।"

चारु प्रतिज्ञा किए बैठी थी कि वह लिखेगी और अमल को आश्चर्यचकित कर देगी। मन्दा और उसमें कितना अन्तर है, इस बात को वह प्रमाणित किए बगैर न मानेगी। पिछले कई दिनों में उसने बहुत लिखा है और फाड़-फाड़कर फेंक दिया है। कारण, उसने जो भी कुछ लिखना शुरू किया वह बिलकुल अमल सरीखा हो गया। मिलाकर देखा तो कहीं-कहीं हूबहू उसकी रचना की नकल-सी मालूम हुई, और वही अंश अच्छे हुए, बाकी के साधारण। और इस बात की कल्पना करके कि देखकर अमल ज़रूर मन

ही मन हंसेगा, चारु ने उन सबको टुकड़-टुकड़े करके तालाब में फेंक दिया,—इस आशंका से कि कहीं एक-आध टुकड़ा अमल के हाथ न लग जाए।

पहले उसने 'श्रावण के मेघ' शीर्षक से कुछ लिखा; और सोचा कि उसने भावों के अश्रुजल से अभिषिक्त एक बहुत सुन्दर रचना लिख डाली है। पीछे सहसा होश आया कि यह तो अमल के 'आषाढ़ का चांद' का ही दूसरा पहलू है ! अमल न लिखा था—"सखा चांद, तुम बादलों में चोर की तरह छुपे-छुपे क्यों फिरते हो ?" और चारु ने लिखा है—"सखी कादम्बिनी, सहसा तुम कहां से आकर नीलांचल के नीचे चांद को चुराकर भागी जा रही हो ?" इत्यादि। जब वह किसी भी तरह अमल की शैली को न छोड़ सकी, तो फिर उसने लिखने का विषय ही बदल दिया। चांद, मेघ, शेफालिका—इन सबको छोड़कर उसने 'देवी के मन्दिर में' लिख डाला। उसके पीहर में वृक्षों की छाया से अन्धकारमय तालाब के किनारे काली का मन्दिर था। उस मन्दिर के विषय में बचपन की कल्पना, भय और उत्सुकता लिए हुए उसकी कुछ विचित्र स्मृतियां थीं, उसकी जाग्रत् देवी के माहात्म्य के सम्बन्ध में गांव में चिरप्रचलित प्राचीन किंवदन्तियां थीं, उन्हींको लेकर उसने यह गद्य लिखा था। उसका प्रारम्भिक भाग अमल की शैली पर काव्याडम्बरपूर्ण था, पर कुछ आगे चलकर रचना अपने आप ही सरल होकर गांव की भाषा-भंगिमा

और आभास से भर गई।

और, उस रचना को अमल ने छीनकर पढ़ लिया। पढ़कर वह मन ही मन कहने लगा, प्रारम्भ का अंश तो बहुत अच्छा हुआ है, किन्तु अन्त तक कवित्व की रक्षा नहीं हुई। खैर कुछ भी हो, प्रथम रचना के लिहाज से लेखिका का उद्यम प्रशंसनीय है।

चारु ने कहा, "लालाजी, हम दोनों मिलकर एक मासिक पत्र निकालें तो कैसा हो?"

अमल ने कहा, "बहुत-से रौप्यचन्द्र के बिना पत्र चलेगा कैसे?"

चारु बोली, "हमारे इस पत्र में कोई खर्च नहीं। छपेगा थोड़े ही, हाथ का लिखा होगा। उसमें हमारे-तुम्हारे सिवा और किसीका लेख नहीं निकलेगा, और न किसी-को पढ़ने ही दिया जाएगा। सिर्फ दो ही प्रति निकलेंगी, एक तुम्हारे लिए और एक मेरे लिए।"

कुछ दिन पहले यह बात हुई होती तो अमल मारे खुशी के उछल पड़ता, किन्तु अब उसका गोपनता का उत्साह जाता रहा। अब तो बिना दस-बीस को सामने रखे लिखने में उसे कुछ आनन्द ही नहीं आता। फिर भी पुराना ठाठ कायम रखने के लिए उसने उत्साह दिखाया। बोला, 'बड़ा मज़ा रहेगा!"

चारु ने कहा, "मगर तुम्हें एक प्रतिज्ञा करनी होगी। अपने पत्र के सिवा और कहीं भी तुम अपने लेख प्रका-

शित नहीं करा सकते।"

अमल बोला, "तब तो सम्पादक लोग मुझे मार ही डालेंगे।"

चारु ने कहा, "और मेरे हाथ में मारने का कोई अस्त्र ही नहीं, क्यों ?"

बात तय हो गई। दोनों सम्पादक, दोनों लेखक और दोनों पाठकों की कमेटी बैठी। अमल ने कहा, "पत्र का नाम रखा जाए 'चारुकला' !"

चारु ने तुरन्त निर्णय दिया, "नहीं, उसका नाम होगा 'अमला'।"

इस नई व्यवस्था से चारु बीच के कुछ दिनों का दुःख भूल गई। खासकर इसलिए कि उनके इस मासिक पत्र में मन्दा के प्रवेश का तो कोई रास्ता ही नहीं, और साथ ही बाहर के और किसीके लिए भी प्रवेश-द्वार बिलकुल बन्द है।

७

एक दिन भूपति ने आकर चारु से कहा, "चारु, तुम लेखिका हो जाओगी, ऐसी तो कभी कोई बात नहीं हुई थी!" चारु मारे लज्जा के आरक्त हो उठी, चौंककर बोली, "मैं, और लेखिका ! किसने कहा तुमसे ? हरगिज़ नहीं।"

भूपति ने कहा, "माल समेत गिरफ्तार जो हो गई

हो, प्रेयसी! सबूत हाथों हाथ लो!" कहते हुए उन्होंने 'सरोरुह' का वह अंक निकालकर दिखा दिया। चारु ने देखा कि अपनी जिन रचनाओं को वह अपनी गुप्त सम्पत्ति समझकर अपने हस्त-लिखित मासिक पत्रिका में संचित कर रही थी वे ही रचनाएं मय लेखक-लेखिका के नाम के 'सरोरुह' में प्रकाशित कर दी गई हैं! सहसा उसे ऐसा लगा कि मानो किसीने उसके पिंजड़े की बड़े जतन से पाली हुई चिड़ियों को, दरवाज़ा खोलकर, उड़ा दिया है। भूपति के सामने पकड़े जाने की लज्जा को भूलकर वह विश्वास-घाती अमल पर मन ही मन खूब नाराज़ होने लगी।

इतने में "और यह देखो!" कहते हुए भूपति ने चारु के सामने 'विश्वबन्धु' मासिक पत्र खोलकर रख दिया। उसमें 'आजकल की लेखन-शैली' शीर्षक एक लेख निकला था। चारु ने उसे हाथ से अलग हटाते हुए कहा, "इसका मैं क्या करूंगी!" तब उसे अमल पर इतना गुस्सा आ रहा था कि मारे अभिमान के वह दूसरी तरफ़ मन ही न दे सकती थी।

भूपति ने ज़ोर देकर कहा, "एक बार पढ़ तो देखो!"

चारु को उसपर आंखें फेरनी ही पड़ीं। लेखक ने आधुनिक किसी-किसी श्रेणी के लेखकों के भावाडम्बर से भरे हुए गद्य की निन्दा करते हुए बहुत कड़ा विरोध किया है। साथ ही मन्मथ दत्त की लेखन-शैली का बहुत ज़ोर का मज़ाक उड़ाया है, और उसके साथ तुलना करते हुए

नवीन लेखिका सुश्री चारुलता की भाषा की अकृत्रिम सरलता, अनायास सरसता और चित्र-रचना की निपुणता की बहुत प्रशंसा की है। लिखा है, "ऐसी रचना-शैली का अनुकरण करके सफलता प्राप्त कर सकें, तभी अमल कम्पनी का उद्धार हो सकता है, अन्यथा वह बिलकुल फेल हो जाएगी, इसमें कोई सन्देह नहीं।"

भूपति ने कहा, "इसीको कहते हैं 'गुरु-मार विद्या'।"

चारु अपनी रचना की इस प्रथम प्रशंसा से एक बार खुश होने को हुई, किन्तु उसी क्षण वह व्यथित होने लगी। प्रसन्नता उसके मन में मानो किसी तरह आना ही नहीं चाहती। प्रशंसा का लोभनीय सुधा-पात्र ज्योंही उसके होंठों तक पहुंचा त्योंही चट से वह उसे ढकेलकर अलग कर देने लगी। उसे ऐसा लगा कि उसकी रचना मासिक पत्र में छपवाकर अमल ने सहसा उसे विस्मित कर देने का संकल्प किया होगा; और अन्त में, छप जाने के बाद उसने तय किया होगा कि किसी पत्र में प्रशंसापूर्ण आलोचना निकले तो वह दोनों को एकसाथ दिखाकर उसका रोष ठण्डा और उत्साह गरम कर देगा। तो फिर जब प्रशंसा निकली थी तब अमल उसे आग्रह के साथ दिखाने क्यों नहीं आया? इस समालोचना से अमल को ज़रूर कुछ चोट पहुंची होगी और उसे छिपाने के लिए ही वह इन पत्रों को दबा गया है। चारु ने अपने सुख के लिए अत्यन्त एकान्त में जो एक साहित्य-नीड़ बनाया था,

अकस्मात् प्रशंसा की शिला-वृष्टि का एक बड़ा-सा ओला पड़ते ही उसके स्खलित होकर नीचे गिर पड़ने की नौबत आ पहुंची। चारु को यह कतई अच्छा नहीं लगा।

भूपति के चले जाने पर चारु अपने सोने के कमरे में जाकर चुपचाप पलंग पर जा बैठी। सामने उसके 'सरोरुह' और 'विश्वबन्धु' पत्र खुले पड़े थे।

इतने में अमल ने, कापी हाथ में लिए हुए, चारु को सहसा चकित कर देने के खयाल से दबे-पांव पीछे से कमरे में प्रवेश किया। चारु के पास जाकर देखा तो, वह अपने सामने 'विश्वबन्धु' की समालोचना खोले निमग्नचित्त बैठी है।

अमल जैसे आया था वैसे ही दबे-पांव बाहर निकल गया। वह सोचने लगा, 'मेरी निन्दा और चारु की शैली की प्रशंसा हो जाने से चारु को ऐसी खुशी हुई है कि बाहर का कुछ होश-हवास तक नहीं!' क्षण-भर में उसका सम्पूर्ण चित्त मानो कड़ुवा हो गया। 'चारु एक मूर्ख की समालोचना पढ़ के अपने को गुरु से भी बढ़कर समझने लगी' यह सोचकर अमल को चारु पर बहुत गुस्सा आया। मन ही मन उसने कहा, 'चारु को चाहिए था कि उस पत्र के वह टुकड़े-टुकड़े कर डालती और आग में जलाकर भस्म कर देती।'

चारु पर गुस्सा होकर अमल तुरन्त मन्दा के कमरे के सामने पहुंचा, पुकारा, "मन्दा भाभी!" अमल का कण्ठ-

स्वर सुनते ही मन्दा ने उसका स्वागत किया, "आओ, लालाजी ! आज तो बिना मांगे ही दर्शन पा गई ! आज मेरी तकदीर वुलन्द मालूम होती है।"

अमल ने कहा, "मैं अपनी दो-एक नई रचनाएं लाया हूं, सुनोगी क्या ?" मन्दा ने कहा, "न जाने कितने दिनों से 'सुनाऊंगा, सुनाऊंगा' कहके आशा ही देते आ रहे हो, सुनाते कहां हो ? ज़रूरत नहीं, भइया ! फिर कहीं कोई नाराज़ हो गई तो तुम्हारी ही आफत है, मेरा क्या है !"

अमल ने ज़रा कुछ तीखे स्वर में कहा, "कौन नाराज़ होगी ? और क्यों होगी ? अच्छा, जो होगा सो देखा जाएगा, तुम अभी सुनो तो सही।"

मन्दा अत्यन्त आग्रह के साथ जल्दी से संयत होकर बैठ गई। और अमल ने सुरीले कण्ठ से समारोह के साथ पढ़ना शुरू किया।

अमल की रचना मन्दा के लिए बिलकुल ही विदेशी थी। उसमें उसे कहीं कोई किनारा नहीं सुझाई देता। और इसलिए वह अपने सारे चेहरे पर आनन्द की हंसी लाकर अतिरिक्त व्यग्रता के साथ सुनने लगी। उत्साह से अमल का कण्ठ उत्तरोत्तर ऊंचा होने लगा। वह पढ़ने लगा, "अभिमन्यु ने जैसे गर्भावस्था में केवल व्यूह में प्रवेश करना ही सीखा था, निकलना नहीं सीखा, उसी तरह नदी के स्रोत ने गिरि कन्दराओं के पाषाण-जठर में रहकर

केवल सामने ही चलना सीखा है, पीछे लौटना नहीं सीखा। हाय रे नदी का स्रोत, हाय रे यौवन, हाय रे काल, हाय रे संसार, तुम सब के सब केवल सामने ही चल सकते हो, जिस मार्ग में स्मृति के स्वर्ण-मण्डित कंकड़ बखेर आते हो उस मार्ग पर फिर तो कभी कदम ही नहीं रखते ! मनुष्य का मन ही केवल पीछे की ओर देखा करता है, अनन्त जगत् उस तरफ मुड़कर देखता तक नहीं !"

ठीक इसी समय दरवाज़े के पास एक छाया दिखाई दी, और मन्दा ने उसे देख लिया, किन्तु ऐसे ढंग से जैसे देखा ही न हो ! और वह अनिमेष दृष्टि से अमल के मुंह की ओर देखती हुई स्थिर-गम्भीर मनोयोग के साथ उसका पढ़ना सुनने लगी। छाया उसी क्षण वहां से हट गई।

चारु प्रतीक्षा कर रही थी कि अमल के आने पर उसके सामने 'विश्वबन्धु' को वह यथोचित रूप से लांछित करेगी, और प्रतिज्ञा भंग करके अमल ने जो उसकी रचना बाहर के पत्र में प्रकाशित कराई है इसके लिए उसे फटकारेगी। किन्तु, अमल के आने का समय निकल गया, फिर भी उसका पता नहीं ! इस बीच में चारु ने एक और गद्य लिखकर तैयार कर लिया था। अमल को सुनाने की इच्छा है, किन्तु श्रोता की अनुपस्थिति में वह यों ही पड़ा था।

इसी समय कहीं से उसे अमल का कण्ठस्वर सुनाई

दिया। 'अच्छा तो यह बात है, मन्दा के कमरे में !' सोचते ही वह बाण-विद्ध की तरह उठ खड़ी हुई और दबे पांव मन्दा के दरवाज़े के पास आकर खड़ी हो गई। अमल जो लेख मन्दा को सुना रहा था उसे चारु ने अभी तक नहीं सुना। अमल पढ़ रहा था, "मनुष्य का मन केवल पीछे की ओर देखा करता है, अनन्त जगत् उस तरफ मुड़कर देखता तक नहीं।"

चारु जैसे दबे पांव आई थी वैसे वह चुपके से जा न सकी। आज एक के बाद एक दो-तीन आघातों ने उसे बिलकुल धैर्य-च्युत कर दिया। 'मन्दा एक अक्षर भी समझ नहीं रही और अमल बिलकुल निर्बोध मूढ़ की तरह उसे अपनी रचना सुनाकर तृप्त हो रहा है !' यह बात ज़ोर से चिल्लाकर कह जाने की उसकी इच्छा हुई; किन्तु मुंह से कुछ कह न सकने के कारण, मारे क्रोध के वह पैरों की आवाज़ से उसे प्रकट कर गई। अपने कमरे में जाकर उसने ज़ोर से, आवाज़ के साथ, किवाड़ बन्द कर लिए।

अमल ने क्षण-भर के लिए पढ़ना स्थगित कर दिया। मन्दा ने हंसकर चारु के कमरे की तरफ इशारा किया। अमल ने मन ही मन कहा, 'भाभी की यह कैसी ज़्यादती है ! उन्होंने यही सोच रखा है कि मैं उन्हींका खरीदा हुआ गुलाम हूं ! उनके सिवा और किसीको भी मैं अपनी रचना नहीं सुना सकता ! यह तो बड़ा भारी ज़ुल्म है।' फिर वह पहले से और भी ऊंचे स्वर में पढ़ने लगा।

पढ़ना खतम हो जाने पर अमल चारु के कमरे के सामने से निकल गया, एक बार केवल देख-भर लिया कि चारु ने अपना दरवाज़ा बन्द कर लिया है। और चारु ने भी पैरों की आहट से समझ लिया कि अमल उसके कमरे के सामने से चला जा रहा है। एक बार रुका तक नहीं! क्रोध और क्षोभ से उसे रुलाई भी न आई। उसने अपने नये लेखों की कापी निकालकर उसका प्रत्येक पन्ना फाड़-फाड़कर टुकड़े-टुकड़े करके ढेर लगा दिया। हाय, किस कुमुहूर्त में उनका यह लिखना-लिखाना शुरू हुआ था।

८

सन्ध्या का समय है, बरामदे के टब से जूही की सुगन्ध आ रही है। बिखरे हुए बादलों के भीतर से स्निग्ध आकाश में तारे दिखाई दे रहे हैं। चारु ने अभी तक बाल नहीं संवारे, कपड़े भी नहीं बदले। खिड़की के पास अंधेरे में अकेली बैठी है, मृदु-मन्द पवन उसके खुले बालों को उड़ा रहा है, और उसकी आंखों से जो टपटप आंसू गिर रहे हैं उसका उसे होश ही नहीं!

इतने में भूपति ने कमरे में प्रवेश किया। उनका चेहरा अत्यन्त उदास और हृदय भाराक्रान्त था। भूपति के आने का यह समय नहीं था। अखबार के लिए कुछ

लिखकर और प्रूफ देखकर घर आने में उन्हें अक्सर देर हो ही जाती है। आज शाम होने के बाद ही वे मानो किसी सान्त्वना की आशा से, चारु के पास चले आए। ज़रा कुछ आश्चर्य के साथ उन्होंने चारु को पुकारा, "चारु!"

अचानक भूपति की आवाज़ से चौंककर चारु चट से उठ बैठी। उसने यह नहीं सोचा था कि इस समय भूपति आ सकते हैं। भूपति ने उसके बालों में उंगलियां फेरते हुए स्नेहार्द्र कण्ठ से कहा, "अंधेरे में अकेली बैठी हो जो! मन्दा कहां गई?"

चारु ने जैसी कि आशा कर रखी थी, आज दिन-भर वैसा कुछ हुआ ही नहीं। वह निश्चित जानती थी कि अमल आके माफी मांगेगा। उसके लिए तैयार होकर ही वह प्रतीक्षा कर रही थी। इतने में पति के अप्रत्याशित कण्ठ-स्वर से मानो वह अपने को सम्हाल न सकी, और एकाएक रो पड़ी।

भूपति ने घबराकर और व्यथित होकर पूछा, "क्या हुआ, चारु?"

'क्या हुआ है' यह बताना मुश्किल है। और ऐसा हुआ भी क्या है जो कहा जाए? कोई खास बात तो हुई नहीं। 'अमल ने अपनी नई रचना पहले उसे न सुनाकर मन्दा को सुनाई है' इस बात की वह किससे क्या शिकायत करे? सुनने से भूपति हंसी नहीं उड़ाएंगे? इस छोटी-सी बात में ज़बरदस्त शिकायत का विषय कहां छुपा हुआ है

उसे ढूंढ़ निकालना चारु के लिए असाध्य है। बिना कारण वह इतना दुःख पा रही है, यह बात पूरी तरह से समझ में न आने से उसकी वेदना और भी बढ़ गई।

भूपति ने कहा, "बताओ न, तुम्हें क्या हो गया ? मैंने क्या तुमपर किसी तरह का अन्याय किया है ? तुम तो जानती ही हो, मैं काम-काज के झंझट में किस कदर फंसा रहता हूं। तुम्हारे मन को किसी तरह की ठेस पहुंची हो, तो इतना निश्चित समझना कि मैंने जान-बूझकर हरगिज़ नहीं पहुंचाई।"

भूपति चारु से ऐसे विषय में पूछ रहा है जिसका उसके पास कोई जवाब नहीं; और इसीलिए चारु भीतर ही भीतर और भी अधीर हो उठी। वह सोचने लगी, ये इस समय उसे किसी तरह छुटकारा दे दें तो वह जी जाए।

भूपति ने दूसरी बार भी कुछ उत्तर न पाकर फिर स्नेह-सिक्त स्वर में कहा, "मैं बराबर तुम्हारे पास आ नहीं पाता, चारु, इसके लिए मैं अपने को अपराधी समझता हूं, लज्जित होता हूं। अब ऐसा न होगा। अब मैंने तय कर लिया है कि दिन-रात अखबार के पीछे न पड़ा रहूंगा। मुझे तुम जितना चाहोगी उतना ही पाओगी, चारु !"

चारु अधीर होकर उठी, बोली, "इसलिए नहीं…"

भूपति ने कहा, "तो किसलिए ?" और वे पलंग पर

बैठ गए।

चारु अपने विरक्ति के स्वर को छिपा न सकी, बोली "अभी नहीं, रात को बताऊंगी।"

भूपति क्षण-भर स्तब्ध रहकर बोले, "अच्छा, जाने दो।" और धीरे से उठकर बाहर चले गए। उन्हें खुद जो कुछ कहना था सो भी नहीं कह सके।

भूपति एक तरह का क्षोभ लेकर ही लौट गए थे; और यह बात चारु से छिपी न रही। उसके मन में आई कि वह उन्हें वापस बुला ले। पर बुलाकर कहेगी क्या? अनुताप उसके कलेजे में छिद-सा गया, किन्तु कोई प्रतिकार उसे ढूंढ़े न मिला।

रात हुई। चारु ने आज खूब जतन से पति की थाली सजाई; और पंखा हाथ में लिए उनकी प्रतीक्षा में बैठी रही।

इतने में उसने सुना कि मन्दा ऊंचे स्वर से पुकार रही है, "बिरजू, बिरजू!" और बिरजू नौकर के आ जाने पर पूछ रही है, "अमल बाबू खा चुके क्या?" बिरजू ने जवाब दिया, "हां, खा चुके।" मन्दा ने कहा, "खा चुके और तू पान नहीं ले गया जो!" मन्दा बिरजू को खूब डांटने लगी।

ठीक इसी समय भूपति भीतर आए और भोजन करने बैठ गए। चारु पंखा करने लगी।

चारु ने आज प्रतिज्ञा की थी कि पति के साथ वह

प्रसन्नता और मिठास से खूब बातें करेगी। और बातचीत का विषय वह पहले ही सोचकर तैयार हुई बैठी थी। किन्तु मन्दा के कंठस्वर ने उसका विस्तृत आयोजन तोड़-फोड़कर नष्ट कर दिया। नतीजा यह हुआ कि भोजन कराते समय भूपति से वह एक भी बात न कर सकी। भूपति भी अत्यन्त विमर्ष और अन्यमनस्क थे। उन्होंने अच्छी तरह खाया भी नहीं। चारु ने सिर्फ एक बार पूछा, "आज कुछ खाया तो नहीं तुमने ?" भूपति ने प्रतिवाद करते हुए कहा, "क्यों, कम तो नहीं खाया !"

सोने के कमरे में पहुंचने पर भूपति ने चारु से कहा, "हां, रात को तुम क्या कहना चाहती थीं, अब कहो।"

चारु ने कहा, "देखो, कुछ दिनों से मन्दा का व्यवहार मुझे अच्छा नहीं लग रहा। उसे यहां रखने की अब मेरी हिम्मत नहीं पड़ती।"

भूपति ने कहा, "क्यों, क्या कर डाला ?"

चारु ने कहा, "अमल के साथ उसका ऐसा व्यवहार चल रहा है कि देखनेवाले को शर्म आ जाए !"

भूपति ने हंसकर कहा, "हः हः हः, तुम पागल तो नहीं हो गई ! अमल अभी लड़का है। उस दिन का लड़का…"

चारु बोली, "तुम तो घर की खबर कुछ रखते नहीं, सिर्फ बाहर की खबरें ही छापा करते हो। कुछ भी हो, बेचारे भइया के लिए मुझे सोच है। उन्होंने कब खाया,

कब नहीं खाया, मन्दा इस बात की खोज ही नहीं रखती; और अमल के लिए ऐसी चौकन्नी कि पान में ज़रा चूना भी कम हो जाए तो नौकर-चाकरों को डांट-फटकारकर अनर्थ कर डालती है!"

भूपति ने कहा, "असल में तुम औरतों की जात ही बड़ी शक्की होती है। यह कुछ नहीं, फालतू बात है।"

चारु ने कहा, "अच्छा, हम औरतें सब शक्की ही सही! पर ऐसा बेहयापन मैं अपने घर में न होने दूंगी, कहे देती हूं!"

चारु की इन सब बेबुनियाद आशंकाओं से भूपति मन ही मन हंसे और खुश भी हुए। घर जिससे पवित्र रहे और दाम्पत्य-धर्म को आनुमानिक या काल्पनिक कलंक भी रंचमात्र स्पर्श न कर जाए, इसके लिए सती-साध्वी स्त्रियों का अतिरिक्त सावधान रहना और सन्दिग्ध दृष्टि रखना, इसमें भी एक माधुर्य और महत्त्व है। भूपति ने श्रद्धा और स्नेह से चारु का ललाट चूमकर कहा, "बस, इतनी-सी बात को लेकर शोर मचाने की कोई ज़रूरत नहीं। उमापति मैमनसिंह में प्रैक्टिस करने जा रहा है, मन्दा को भी साथ लेता जाएगा।"

अन्त में अपनी दुश्चिन्ता और इन सब अप्रिय आलोचनाओं को दबा देने के लिए भूपति ने टेबल से एक कापी उठाकर कहा, "आज तुम अपनी कोई रचना सुनाओ न, चारु!" चारु ने झट से कापी छीन ली, और कहा, "यह

तुम्हें अच्छी नहीं लगेगी, तुम मज़ाक उड़ाओगे !"

भूपति इस बात से कुछ व्यथित हुए; किन्तु चारु से छिपाकर हंसते हुए बोले, "अच्छा, मैं मज़ाक नहीं उड़ाऊंगा। ऐसा मन लगाकर सुनूंगा कि तुम्हें भ्रम हो जाएगा कि शायद मैं सो गया हूं !" किन्तु फिर भी भूपति उसपर कुछ प्रभाव न डाल सके, और देखते-देखते उसकी सब कापियां अनेक आवरणों में विलीन हो गईं।

९

भूपति अपने मन की सब बातें चारु से न कह सके थे। उमापति भूपति के आफिस का मैनेजर था। चन्दा वसूल करना, प्रेस और बाज़ार का सारा लेन-देन, नौकरों को तनखा देना इत्यादि सब काम उसीके ज़िम्मे था।

इस बीच में अचानक एक दिन कागज़वाले की तरफ से वकील का नोटिस पाकर भूपति दंग रह गए। भूपति पर उसके सत्ताईस सौ रुपये निकलते हैं ! उन्होंने उमापति को बुलाकर कहा, "यह क्या बात है ! ये रुपये तो मैं तुम्हें दे चुका हूं। कागज़वाले का देना चार-पांच सौ से ज़्यादा नहीं होना चाहिए।"

उमापति ने कहा, "ज़रूर उसने कोई गलती की है।"

किन्तु बात दबी नहीं रही। कुछ दिनों से उमापति

इसी तरह धोखा देता आ रहा है। सिर्फ एक कागज़ के बारे में ही नहीं, भूपति के नाम से उसने बाज़ार में बहुत कर्ज़ा कर लिया है। गांव में जो वह अपने लिए पक्की हवेली बनवा रहा है उसका अधिकांश सामान उसने भूपति के नाम लिखाकर लिया है, और इसमें बहुत-सा रुपया कागज़ खाते का लगा दिया है।

आखिर जब वह पकड़ गया, तो रूखे स्वर से बोला, "मैं तो कहीं भागा नहीं जा रहा। काम करके धीरे-धीरे मैं सब चुका दूंगा। तुम्हारी अगर एक कौड़ी भी बाकी रह जाए तो मेरा नाम बदल देना।" उसके नाम परिवर्तन से भूपति को तसल्ली नहीं हो सकती। असल में मात्र रुपये के नुकसान से उन्हें उतना दुःख नहीं हुआ, किन्तु अकस्मात् इस विश्वासघात से उनके पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई।

उसी दिन वे असमय में चारु के पास गए थे। इस संसार में कम से कम एक जगह विश्वास करने लायक है, क्षण-भर के लिए इस बात का अनुभव कर आने के लिए उनका हृदय व्याकुल हो उठा था। किन्तु, चारु तब अपने ही दुःख से, संध्या-प्रदीप बगैर जलाए ही, खिड़की के पास अंधेरे में बैठी थी।

उमापति ने दूसरे ही दिन मैमनसिंह जाने की तैयारी कर ली। बाज़ारवालों को मालूम होने के पहले ही वह खिसक जाना चाहता था। भूपति मारे घृणा के उमापति

से बोले तक नहीं। और भूपति की इस चुप्पी को उमापति ने अपना सौभाग्य समझा !

अमल ने आकर मन्दा से पूछा, "मन्दा भाभी, बात क्या हुई ? चीज़-बस्त बांधने की यह धूम कैसी ?" मन्दा ने कहा, "पराया घर ठहरा, जाना तो पड़ेगा ही। हमेशा क्या यहीं बनी रहूंगी !" अमल ने पूछा, "आखिर है कहां की तैयारी ?" मन्दा बोली, "देश की।" अमल ने कहा, "क्यों,यहां क्या तकलीफ हो गई ?" मन्दा ने कहा, "तकलीफ मुझे क्या है बताओ ! तुम सबों के साथ थी, आराम से ही थी। लेकिन औरों को जो तकलीफ होने लगी !" इतना कहकर उसने चारु के कमरे की तरफ कटाक्ष किया।

अमल गम्भीर होकर चुप हो रहा। मन्दा ने कहा, "छि:, छि:, कैसी शरम की बात है ! भूपति बाबू अपने मन में क्या सोचते होंगे !"

अमल ने इस बात को लेकर आगे कुछ चर्चा नहीं की। अपने मन में सिर्फ इतना समझ लिया कि चारु ने उन दोनों के बारे में भाई साहब से ऐसी कोई बात कही है जो कहने की नहीं है।

अमल घर से निकलकर रास्ते में टहलने लगा। उसकी ऐसी तबीयत हो गई कि वह इस घर में अब वापस न आवे। वह सोचने लगा, भाई साहब ने अगर भाभी की बात पर विश्वास करके उसे अपराधी समझ लिया हो, तो मन्दा को जिस रास्ते जाना पड़ रहा है उसे भी

वही रास्ता पकड़ना चाहिए। मन्दा को विदा करना एक हिसाब से अमल के लिए निर्वासन का ही आदेश है, सिर्फ वह मुंह से कहा नहीं गया, बस। इसके बाद तो उसका कर्तव्य बिलकुल स्पष्ट है, अब एक क्षण भी यहां नहीं रहा रहा जा सकता। किन्तु भाई साहब उसके विषय में मन ही मन किसी तरह की अनुचित धारणा बनाए रखें, यह भी तो ठीक नहीं। इतने दिनों से वे उसे अक्षुण्ण विश्वास से घर में स्थान देकर उसका पालन-पोषण करते आए हैं, और उस विश्वास पर उसने किसी भी अंश में चोट नहीं पहुंचाई, यह बात भाई साहब को वगैर समझाए वह कैसे जा सकता है !

भूपति उस समय रिश्तेदारों की कृतघ्नता, पावनेदारों के तकाज़े, जाली हिसाब और रीती तहवील को लेकर माथे पर हाथ धरे चिन्ता में डूबे हुए थे, इस शुष्क मानसिक दुःख में उनका कोई साथी न था। वे गम्भीर मनोवेदना और कर्ज़ के साथ अकेले खड़े जूझने के लिए तैयार हो रहे थे। इतने में अमल ने आंधी की तरह उनके कमरे में प्रवेश किया। भूपति ने अपनी अथाह दुश्चिन्ता में से सहसा चौंककर उसकी तरफ देखा, और बोले, "क्या खबर है, अमल ?" अकस्मात् उन्हें ऐसा मालूम हुआ जैसे अमल और कोई दुःसंवाद लेकर आया हो।

अमल ने कहा, "भाई साहब, मुझपर सन्देह करने का क्या कोई कारण हुआ है ?" भूपति ने आश्चर्य के

साथ कहा, "तुम्हारे ऊपर सन्देह !" और मन ही मन सोचने लगे, 'जैसी कि दुनिया देख रहा हूं, किसी दिन अमल पर भी सन्देह करना पड़े तो कोई ताज्जुब नहीं।'

अमल ने कहा, "भाभी ने मेरे चरित्र के सम्बन्ध में कोई शिकायत नहीं की है ?"

भूपति ने मन ही मन कहा, 'यह बात है ! खैर जी में जी तो आया। स्नेह का अभिनय है !' उन्होंने सोचा था कि सर्वनाश पर शायद और कोई सर्वनाश हो गया ! मगर भयंकर संकट के समय में भी इन सब तुच्छ विषयों को सुनना ही पड़ता है। दुनिया एक ओर पुल को झकझोरती भी रहेगी और दूसरी ओर उसको अपनी शाक-सब्ज़ी की डालियां पार करने के लिए ताकीद करने से भी बाज़ नहीं आएगी। दुनिया का दस्तूर ही यही है। और कोई वक्त होता, तो शायद भूपति अमल का मज़ाक उड़ाते; किन्तु आज उनमें वह प्रसन्नता नहीं थी। उन्होंने कहा, "पागल तो नहीं हो गए !"

अमल ने फिर पूछा, "भाभी ने कुछ कहा नहीं है ?"

भूपति ने कहा, "तुमसे वे बहुत स्नेह करती हैं, इसलिए कुछ कहा भी हो तो उसमें गुस्सा होने की कोई बात नहीं।"

अमल ने कहा, "काम-धन्धे की कोशिश में मुझे और कहीं जाना चाहिए।"

भूपति ने डांटते हुए कहा, "अमल, तुम ऐसा

लड़कपन कर रहे हो जिसकी हद नहीं। अभी मन लगाकर पढ़ो-लिखो, काम-धन्धे की बात पीछे सोचना।"

अमल उदास चेहरा लेकर वहां से चल दिया, और भूपति ग्राहक-रजिस्टर में दर्ज तीन साल के चन्दे के साथ खाता-बही का मिलान करने लगे।

१०

अमल ने सोच-विचारकर यह निश्चय किया कि भाभी के साथ भाई साहब का मुकाबला करा ही देना होगा, इस बात को खतम किए बिना वह नहीं छोड़ेगा। और साथ ही भाभी को जो-जो कड़ी बातें सुनानी हैं उन्हें भी वह मन ही मन याद करने लगा।

उधर मन्दा के चले जाने पर चारु ने संकल्प किया कि अमल को वह अपने से बुलाकर उसका रोष शान्त कर देगी। किन्तु कोई रचना सुनाने के बहाने उसे बुलाना होगा। अमल की ही एक रचना के अनुकरण पर चारु ने 'अमावस्या का प्रकाश' शीर्षक एक गद्य तैयार किया है। इतना तो उसने समझ ही लिया है कि अमल को उसकी स्वतन्त्र शैली की रचना पसन्द नहीं आती।

चारु ने अपनी नई रचना में 'पूर्णिमा जो अपना सम्पूर्ण प्रकाश एकसाथ ही प्रकट कर देती है' इसके लिए यथेष्ट तिरस्कार करके उसे लज्जित किया है। उसने

लिखा है, "अमावस्या के अतल स्पर्श अन्धकार में षोड़श कलापूर्ण चन्द्रमा का सम्पूर्ण प्रकाश स्तर-स्तर में आबद्ध पड़ा है, उसकी एक किरण भी खोई नहीं है, इसीसे पूर्णिमा की उज्ज्वलता से अमावस्या की कालिमा इतनी परिपूर्ण है।" आदि-आदि। अमल अपनी सभी रचनाएं सबके सामने प्रकट कर देता है और चारु ऐसा नहीं करती, पूर्णिमा और अमावस्या की इस तुलना में क्या इस बात का आभास है ?

उधर इस परिवार के तृतीय व्यक्ति भूपति किसी आसन्न ऋण की तागीद से छुटकारा पाने के लिए अपने परम मित्र मोतीलाल के पास रुपये मांगने गए थे। मोतीलाल को संकट के समय में भूपति ने कई हज़ार रुपये दिए थे ; और आज वे अपने इस घोर संकट में उनसे अपने वे ही रुपये वापस लेने गए थे। मोतीलाल नहा-धोकर अपने उघड़े बदन पर पंखे की हवा लगा रहे थे और सामने लकड़ी के बक्स पर कागज़ रखकर उसपर छोटे-छोटे अक्षरों में 'सहस्र दुर्गा नाम' लिख रहे थे। भूपति को देखकर वे अत्यन्त सहृदयता के स्वर में बोले, "आओ, आओ ! आजकल तो तुम्हारे दर्शन ही नहीं मिलते !"

बाद में, मित्र के मुंह से रुपये की बात सुनकर मोतीलाल ज़मीन-आसमान की चिन्ता करते हुए बोले, "कौन-से रुपयों की बात कह रहे हो तुम ! इधर तुमसे

कुछ लिया है क्या ?"

भूपति के सम्वत् और तारीख के साथ पुरानी सब बातें याद दिलाने पर मोतीलाल ने ठहाका मारकर हंसते हुए कहा, "अच्छा, उन रुपयों की कह रहे हो ! अरे, उसे तो बहुत दिन हो गए तमादी हुए !"

भूपति की दृष्टि में दुनिया का चेहरा ही मानो चारों तरफ से बदल गया। दुनिया के जिस हिस्से से नकाब खुलकर गिर गया उस हिस्से को देखकर भूपति के रोएं खड़े हो गए। सहसा बाढ़ आ जाने पर जैसे डरा हुआ आदमी जिधर सबसे ज़्यादा ऊंचा देखता है उसी तरफ भागने लगता है, ठीक उसी तरह भूपति भी इस निष्ठुर बहिः संसार से बड़े ज़ोर से अपने अन्तःपुर की तरफ भागे। और मन ही मन कहने लगे, 'संसार में और चाहे जो भी हो, कम से कम चारु तो मुझे धोखा नहीं देगी।'

चारु उस समय पलंग पर बैठी गोद में तकिया और तकिये पर कापी रखकर झुकी हुई कुछ लिख रही थी। भूपति जब बिलकुल ही उसके पास जा खड़े हुए तब उसे होश आया, और वह सहम गई, और चट से अपनी पालथी के नीचे कापी दबाकर संभल के बैठ गई।

हृदय में जब कोई व्यथा रहती है तब आदमी को ज़रा-सी बात से बड़ी भारी चोट लगती है। चारु को इस तरह अनावश्यक सहमते और जल्दी से अपनी कापी छिपाते देख भूपति के मन को गहरी चोट पहुंची। फिर भी वे धीरे

से चारु के पास बैठ गए। और चारु अपने रचना-स्रोत में अप्रत्याशित विघ्न आ जाने से और भूपति के आगे सहसा कापी छिपाने की व्यस्तता से ऐसी हो गई कि फिर उसके मुंह से कोई बात ही नहीं निकली।

भूपति के पास आज अपनी तरफ से देने या कहने को कुछ नहीं था। वे रीते हाथ चारु के पास प्रार्थी होकर ही आए थे। चारु की तरफ से अशंकाधर्मी प्रेम का कोई प्रश्न या ज़रा-सा आदर-प्यार मिल जाने से ही उनके घाव पर मरहम लग जाता और दाह मिट जाता। किन्तु यहां तो 'लछमी रहते लछमी गई ?' क्षण-भर की आवश्यकता मिटाने के लिए चारु को मानो प्रेम-भण्डार की चाभी ही कहीं ढूंढ़े नहीं मिली। फिर, दोनों के कठोर मौन से घर की नीरवता अत्यन्त निविड़ हो उठी। कुछ देर तक बिलकुल चुप रहकर अन्त में भूपति एक गहरी सांस लेकर पलंग छोड़के उठ खड़े हुए, और धीरे-धीरे बाहर चले गए।

इसी समय अमल बहुत-सी कड़ी-कड़ी बातों का गट्ठर लिए हुए जल्दी-जल्दी चारु के कमरे की तरफ आ रहा था। रास्ते में उसने भूपति का जो बिल्कुल सूखा सफेद फक चेहरा देखा, तो वह उद्विग्न होकर खड़ा हो गया। बोला, "भाई साहब, आज कुछ तबीयत खराब है क्या तुम्हारी ?" सहसा अमल का स्निग्ध स्वर सुनते ही भूपति का सम्पूर्ण हृदय अपने अश्रु-भार से सहसा मानो उफन-

सा उठा, कुछ देर तक उनके मुंह से कोई बात ही नहीं निकली। बड़ी मुश्किल से अपने को संभालकर उन्होंने आर्द्र कण्ठ से कहा, "नहीं तो। इधर तुम्हारी कोई नई रचना नहीं निकल रही है क्या ?"

अमल ने जो कड़ी-कड़ी बातें इकट्ठी कर रखी थीं, क्षण में वे न जाने कहां गायब हो गईं ! फिर, जल्दी से भाभी के कमरे में जाकर उसने पूछा, "भाभी, भाई साहब को क्या हुआ है, बताओ तो ?" चारु ने कहा, "ऐसी तो कोई बात नहीं हुई। किसी अखबार ने शायद उनके अखबार को गालियां दी होंगी।"

अमल सिर हिलाने लगा।

बिना बुलाए ही अमल आ गया और स्वाभाविक भाव से बातचीत करने लगा, यह देखकर चारु को बहुत ही आराम मिला। उसने तुरत लेख की बात छेड़ दी, बोली, "आज मैं 'अमावस्या का प्रकाश' लिख रही थी, और ज़रा चूक जाती तो वे देख ही लेते !"

चारु ने निश्चित समझ रखा था कि अमल उसकी नई रचना को देखने के लिए आग्रह करेगा और उसके पीछे पड़ जाएगा, और केवल इसी अभिप्राय से उसने अपनी कापी निकालकर ज़रा हिलाई-डुलाई भी। किन्तु अमल ने मात्र एक तीव्र दृष्टि से चारु के चेहरे की ओर देखा, और कुछ नहीं। उसने क्या समझा और क्या सोचा, सो वही जाने। किन्तु दूसरे ही क्षण वह चौंककर उठ खड़ा

हुआ। पर्वत-मार्ग से चलते-चलते पथिक ने मानो सहसा मेघ का कुहरा दूर होते ही चौंककर सामने देखा कि हज़ार हाथ गहरे गड्ढे में वह पांव रखने जा रहा था! कुछ क्षण बाद वह बिना कुछ बोले चुपचाप बाहर चला गया।

अमल के इस अभूतपूर्व आचरण का कुछ अर्थ ही चारु की समझ में न आया। वह स्तब्ध बैठी उसके चलने की गति देखती रह गई।

११

दूसरे दिन भूपति को फिर असमय में शयन-घर में आना पड़ा। चारु को बुलवाकर उन्होंने कहा, "चारु, अमल के लिए एक बड़ी अच्छी सगाई आई है।"

चारु अन्यमनस्क थी। बोली, "अच्छी क्या आई है?"

भूपति ने कहा, "सगाई।"

चारु बोल उठी, "क्यों, मैं क्या पसन्द नहीं आई?"

भूपति ज़ोर से हंस पड़े, बोले, "तुम पसन्द आईं या नहीं, यह बात अभी तक अमल से पूछी नहीं गई। और अगर आ भी गई होगी, तो मेरा भी तो तुमपर छोटा-मोटा दावा है, उसे मैं चट से नहीं छोड़ने का!"

चारु कहने लगी, "अः, क्या बक रहे हो जिसका ठीक नहीं! तुमने कहा नहीं था अभी कि तुम्हारी सगाई आ

रही है ?" उसका चेहरा सुर्ख़ हो उठा।

भूपति ने कहा, "तो क्या मैं दौड़ा-दौड़ा तुम्हींसे कहने आता ? कोई इनाम मिलने की तो आशा थी ही नहीं।"

चारु पूछने लगी, "तो किसकी, अमल की सगाई आई है ? अच्छा ही तो है। फिर देर किस बात की, कर डालो पक्की।"

भूपति ने कहा, "वर्धमान के वकील हैं एक, रघुनाथ बाबू, वे अपनी लड़की के साथ अमल का ब्याह करके उसे पढ़ाने के लिए विलायत भेजना चाहते हैं।"

चारु ने आश्चर्यचकित होकर पूछा, "विलायत ?"

भूपति ने कहा, "हां, विलायत।"

चारु बोली, "अमल विलायत जाएगा ! यह बहुत अच्छा रहा ! अच्छा ही हुआ। तुम उसे एक बार पूछ तो देखो।"

भूपति ने कहा, "मेरे कहने के पहले तुम एक बार उसे समझाकर कहोगी तो ठीक रहेगा।"

चारु ने कहा, "मैं तो हज़ार बार कह चुकी हूं। मेरी बात मानता कौन है ! मुझसे अब नहीं कहा जाएगा।"

भूपति—तुम्हें क्या जंचता है, वह ब्याह नहीं करेगा ?

चारु—और भी तो बहुत बार कोशिश की जा चुकी है। कहां कोई राज़ी होता है !

भूपति—लेकिन अब की बार इस मौके को हाथ

से जाने देना उसके लिए ठीक नहीं। मेरे ऊपर बहुत कर्ज़ा हो गया है, अमल को अब तो मैं पहले की तरह रख नहीं सकता।

भूपति ने अमल को बुलवा लिया। अमल के आने पर उन्होंने कहा, "वर्धमान के वकील रघुनाथ बाबू अपनी लड़की की तुमसे सगाई करना चाहते हैं। उनका कहना है कि ब्याह हो जाने के बाद वे तुम्हें पढ़ाने के लिए विलायत भेजेंगे। तुम्हारी क्या राय है?"

अमल ने कहा, "तुम्हारी अगर आज्ञा हो तो मुझे इसमें कोई आपत्ति नहीं।"

अमल की बात सुनकर भूपति और चारु दोनों को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। कारण, इस बात की आशा ही नहीं थी कि कहते ही वह राज़ी हो जाएगा।

चारु तीव्र स्वर में मज़ाक उड़ाती हुई बोली, "आज तो 'भाई साहब' की आज्ञा होते ही अपनी राय दे दी! अहा, कैसे आज्ञाकारी भाई हैं, ज़रा देखो तो! 'भाई साहब' पर ऐसी भक्ति अब तक कहां गई थी, लाला-जी?"

अमल ने कुछ उत्तर न देकर ज़रा हंसने की कोशिश की।

अमल की इस चुप्पी को देखकर चारु ने मानो उसे चेता देने के लिए दूनी जलन के साथ कहा, "अजी, ऐसा क्यों नहीं कहते कि अपनी ही तबीयत हो रही है! हुंह,

मन-मन भावे औ' मुड़ी हिलावे !"

भूपति हंसते हुए बोले, "मालूम होता है अमल तुम्हारी ही खातिर अब तक सिर हिला रहा था कि कहीं देवरानी की बात सुनकर तुम्हें डाह न होने लगे !"

भूपति की इस बात से चारु का चेहरा सुर्ख हो उठा। वह कोलाहल के साथ कहने लगी, "डाह ! क्यों नहीं ! मुझे डाह कभी नहीं होता। मुझसे ऐसा कहना तुम्हारा बड़ा अन्याय है, हां !"

भूपति बोले, "लो, देखो, अपनी स्त्री से भी मज़ाक नहीं कर सकता मैं !"

चारु ने कहा, "नहीं, ऐसा मज़ाक मुझे अच्छा नहीं लगता।"

भूपति ने कहा, "अच्छा, अच्छा, बड़ा भारी कसूर हो गया। माफ करो। हां तो, अब ब्याह की बात ठीक हो गई न ?"

अमल ने कहा, "हां।"

चारु बोली, "लड़की अच्छी है या बुरी, इतना भी देखने का सबर नहीं हुआ, लालाजी ! तुम्हारी ऐसी दशा हो आई है, कभी ज़रा आभास भी तो दिया होता !"
भूपति ने कहा, "अमल, लड़की देखना चाहो तो उसका भी इन्तज़ाम किया जा सकता है। खबर ली है मैंने, लड़की सुन्दर है।"

अमल—नहीं, देखने-वेखने की मैं तो कोई ज़रूरत

नहीं समझता।

चारु—इनकी बात तो सुनो ! ऐसा भी होता है कहीं ? लड़की बिना देखे ही ब्याह हो जाएगा ? ये न देखना चाहें तो न सही, हम लोगों को तो कम से कम देख ही लेनी होगी।

अमल—नहीं, भाई साहब, देखा-देखी में व्यर्थ देर करने की ज़रूरत नहीं।

चारु—ज़रूरत क्या है जी ! देर होने से छाती जो फटने लगेगी ! तुम 'मौर' बांधकर अभी निकल पड़ो न ! क्या खबर, तुम्हारी उस राज-सम्पदा हीरा-जवाहरात को और कोई उड़ा ले गया तो !

अमल को चारु का कोई भी मज़ाक रंचमात्र विचलित न कर सका।

चारु फिर बोली, "विलायत भागने के लिए भीतर से तुम्हारा मन फड़फड़ा रहा है, क्यों ? यहां तुम्हें कोई मार रहा था या बांध रहा था ? हैट-कोट पहन के साहब बगैर बने आजकल के लड़कों का मन ही नहीं भरता ! लालाजी, विलायत से लौटकर हम जैसे काले आदमियों को पहचान तो लोगे ?"

इस बार अमल ने जवाब दिया, "तो फिर विलायत जाना ही क्या हुआ !"

भूपति ने हंसकर कहा, "काले रूप को भुलाने के लिए ही तो सात समुद्र पार जाना है ! सो, इसमें डरने

की क्या बात है, चारु, हम तो हैं ही, काले के भक्तों की यहां कमी न होगी।"

भूपति ने प्रसन्न होकर उसी वक्त वर्धमान को चिट्ठी लिख दी।

ब्याह का दिन निश्चित हो गया।

१२

इस बीच में भूपति को अपना अखबार बन्द कर देना पड़ा। भूपति के लिए उसका खर्चा चलाना मुश्किल हो गया था। 'सर्वसाधारण' नामक जिस विशाल निर्मल पदार्थ की साधना में भूपति इतने दिनों से एकाग्र चित्त से लगे हुए थे उसे मात्र एक क्षण में विसर्जित कर देना पड़ा। भूपति के जीवन की समस्त चेष्टाएं जो अभ्यस्त मार्ग से गत बारह वर्षों से अविच्छिन्न धारा में बहती चली आ रही थीं वे सहसा एक जगह मानो गहरे पानी में डूब गईं। इसके लिए भूपति ज़रा भी तैयार नहीं थे। अकस्मात् बाधा-प्राप्त अपने इतने दिनों के समस्त उद्यमों को अब वे कहां ले जाएं? उनके वे उद्यम मानो भूखे अनाथ बच्चों की तरह उनका मुंह ताकने लगे, और अन्त में भूपति ने उन्हें अपने अन्तःपुर में करुणामयी सेवा-परायण नारी के सामने ले जाकर खड़ा कर दिया।

किन्तु नारी उस समय क्या सोच रही थी? वह मन

ही मन कह रही थी, 'कैसे आश्चर्य की बात है ! अमल का ब्याह होगा, यह तो अच्छी ही बात है ! पर इतने दिनों बाद हम लोगों को छोड़कर पराये घर ब्याह करके विलायत जाएगा, इससे अमल के मन में थोड़ी देर के लिए एक बार दुविधा तक उत्पन्न नहीं हुई ? इतने दिनों तक हमने जो उसे इतने जतन से रखा उसका कुछ भी खयाल न करके, ज्यों ही ज़रा भागने का रास्ता मिला, चट से कमर कसके भागने को तैयार हो गया ! मानो इतने दिनों से इसी दिन की प्रतीक्षा में रहा हो ! और मुंह से कितनी मीठी-मीठी बातें, कितना प्रेम ! हाय रे संसार, आदमी को पहचानना मुश्किल है। कौन जानता था कि जो आदमी इतना लिख सकता है उसके 'हृदय' ज़रा भी नहीं ! अपने परिपूर्ण हृदय के साथ तुलना करके चारु ने अमल के हृदय की अत्यन्त अवज्ञा करने की कोशिश की, पर कर न सकी, भीतर ही भीतर निरन्तर एक वेदना का उद्रेक तप्त शूल की तरह उसके अभिमान को धक्के दे-देकर उकसाने लगा, 'अमल आज बाद कल चला जाएगा, फिर भी, इधर कई दिनों से उसका पता नहीं ! उनमें परस्पर जो मनोमालिन्य-सा हो गया है उसे मिटा डालने के लिए भी ज़रा फुरसत नहीं मिली !'

चारु प्रतिक्षण सोचती है, अमल अपने-आप आएगा। इतने दिनों के मेल-जोल और हंसी-खेल को वह इस तरह नहीं तोड़ेगा। किन्तु कहां आया अमल ! नहीं आया।

अन्त में जब विलायत जाने का दिन करीब आ पहुंचा तब चारु ने खुद ही अमल को बुलवाया। अमल ने कहला भेजा, 'थोड़ी देर बाद आता हूं।' सुनके चारु अपने बरामदे में वहां की वहीं एक चौकी पर बैठ गई। सवेरे से बदली होने से उमस हो रही थी। चारु अपने खुले बालों को यों ही ढीले तौर से लपेटकर अपने थके हुए शरीर पर पंखे से धीरे-धीरे हवा करने लगी। इसी तरह बहुत समय बीत गया। क्रमशः उसके हाथ का पंखा चलना बन्द हो गया। क्रोध-दुःख-अधैर्य मानो उसकी छाती के भीतर रह-रहकर उफान-सा लेने लगा। मन ही मन कहने लगी, 'अमल नहीं आया तो न सही, इससे मेरा क्या!' किन्तु फिर भी पदशब्द-मात्र से उसका मन द्वार की ओर दौड़ा जाने लगा।

दूर गिरजे की घड़ी में ग्यारह बज गए। नहा-धोकर भूपति अभी भोजन करने आएंगे। अब भी आध घण्टे का समय है, अब भी यदि अमल आ जाए! जैसे भी हो, दोनों को इन कई दिनों का नीरव मनोमालिन्य मिटा ही डालना है। अमल को इस तरह से तो विदा नहीं किया जा सकता। इन समवयस्क देवर-भाभी में जो हमेशा से मधुर सम्बन्ध चला आ रहा है, जिसमें अनेकों बार कुट्टी-मेल, रूठना-मनाना आदि स्नेह के उपद्रव होते रहे हैं, और पवित्र सुखालोचना से जकड़ा हुआ जो चिर छायामय लता कुंज बन चुका है, अमल क्या उसे आज

धूल में मिलाकर बहुत दिनों के लिए बहुत दूर चला जाएगा ? उसे क्या ज़रा भी पश्चात्ताप न होगा ? उसकी जड़ में क्या अन्तिम पानी भी न सींच जाएगा, उनके बहुत दिनों के देवर-भाभी सम्बन्ध का शेष अश्रुजल ?

अब तो वह आधा घण्टा भी बीतना चाहता है। चारु अपने जूड़े को खोलकर उसमें से एक गुच्छा हाथ में लेकर उसे उंगली पर लपेटने और खोलने लगी। उससे आंसू रोके नहीं रुकते। इतने में नौकर ने आकर कहा, "बहूजी, बाबूजी के लिए 'डाभ' निकालना है।" चारु ने आंचल से चाभियों का गुच्छा खोलकर नौकर के आगे फेंक दिया। नौकर अचम्भे में आकर चाभी उठाकर चल दिया। चारु की छाती के भीतर से कोई चीज़ ऊपर को आने लगी।

यथासमय भूपति हंसते हुए भोजन करने आए। चारु पंखा हाथ में लिए चौके में आकर देखती है तो अमल भी भूपति के साथ आया है। चारु ने उसके मुंह की ओर नहीं देखा। अमल ने पूछा, "भाभी, मुझे बुलाया था ?"

चारु ने कहा, "नहीं, अब कोई ज़रूरत नहीं।"

अमल बोला, "तो मैं जाऊं, मुझे चीज़-बस्त सब सम्हालनी हैं।"

चारु ने दीप्त दृष्टि से अमल के मुंह की ओर देखा, और कहा, "जाओ।"

अमल चारु के मुंह की ओर एक बार देखकर चला

गया।

भोजन करने के बाद भूपति कुछ देर के लिए चारु के पास बैठा करते हैं। आज वे लेन-देन और हिसाब के झंझट में बहुत ही व्यस्त थे, इसीलिए ज़्यादा देर ठहर न सकने के कारण कुछ क्षुण्ण होकर बोले, "आज तो मैं ज़्यादा ठहर नहीं सकूंगा, चारु, आज बहुत झंझट है।" चारु ने कहा, "तो जाओ न!"

भूपति ने सोचा, चारु रूठ गई है। बोले, "इसका मतलब यह नहीं कि अभी तुरत ही चला जाऊं! थोड़ी देर आराम करके जाऊंगा।" और बैठ गए। उन्होंने देखा कि चारु उदास हो गई है, इसलिए बहुत देर तक अनुतप्त चित्त से बैठे रहे। किन्तु किसी भी तरह बातचीत का सिलसिला न जमा सके। बहुत देर तक बातचीत करने की वृथा कोशिश करने के बाद अन्त में बोले, "अमल तो कल चला जाएगा, कुछ दिन तुम्हें बिलकुल सूना-सूना-सा मालूम होगा।"

चारु बिना कुछ जवाब दिए ही, कोई चीज़ लाने के बहाने, चट से दूसरे कमरे में चली गई। भूपति ने कुछ देर तक बाट देखी, फिर वे बाहर चले गए।

चारु आज अमल के चेहरे की तरफ देखकर ताड़ गई थी कि इन्हीं कई दिनों में वह बहुत दुबला हो गया है, उसके चेहरे पर तरुणता की पहले की वह स्फूर्ति बिलकुल ही नहीं रही। इससे चारु को खुशी भी हुई और वेदना

भी। आसन्न विच्छेद ने ही अमल को सुखा दिया है, इसमें चारु को सन्देह न रहा। किन्तु फिर भी अमल का ऐसा व्यवहार क्यों ? क्यों वह दूर-दूर छिपा-छिपा फिरता है ? विदा के समय को क्यों वह इच्छापूर्वक ऐसा विरोध-कटु बनाता जा रहा है ?

बिस्तर पर पड़ी-पड़ी वह न जाने क्या-क्या सोच रही थी। सोचते-सोचते अचानक चौंककर उठ बैठी। सहसा उसे मन्दा की बात याद आ गई। सोचने लगी, 'शायद ऐसा हो कि मन्दा से अमल का प्रेम हो गया हो ! मन्दा के चले जाने से ही शायद अमल इस तरह···छि: ! अमल का मन क्या ऐसा होगा ? इतना क्षुद्र ? इतना कलुषित ? विवाहित स्त्री पर उसका मन जाएगा ? असम्भव है।' सन्देह को दूर करने की उसने भरसक कोशिश की, किन्तु सन्देह उसके मन पर दांत गड़ाए ही रहा।

इसी तरह विदा का भी समय आ गया। किन्तु बादल साफ नहीं हुए।

आखिर अमल आया; और कम्पित कण्ठ से बोला, "भाभी, मेरे जाने का समय हो गया। अब से तुम खुद भाई साहब की देख-भाल करना। इस समय वे बड़े संकट में से गुज़र रहे हैं। तुम्हारे सिवा उनके लिए और कहीं भी कोई सांत्वना की जगह नहीं, कोई रास्ता नहीं।"

भूपति के उदास म्लान भाव को देखकर अमल ने सन्धान द्वारा उनकी भीतरी हालत का पता लगा लिया

था। वह इन बातों को सोचकर कि 'भूपति किस तरह चुपचाप अपने दुःख और दुर्दशा से अकेले खड़े लड़ रहे हैं, किसीसे कोई सहायता या सांत्वना तक उन्हें नहीं मिल रही, किन्तु फिर भी अपने आश्रित-पालित आत्मीय स्वजनों को उन्होंने इस प्रलय-संकट में भी विचलित नहीं होने दिया' चुप रहा। उसके बाद फिर उसने चारु की बात सोची, फिर अपनी बात विचारी। उसके कान सुर्ख हो उठे, वह ज़ोर से कह उठा, "चूल्हे में जाए 'आषाढ़ का चांद' और 'अमावस्या का प्रकाश'। अगर मैं बैरिस्टर होकर भाई साहब की कुछ मदद कर सका, तभी मैं पुरुष हूं।"

पिछली रात को सारी रात जागकर चारु ने सोच रखा था कि विदा होते समय वह अमल को क्या-क्या कहेगी। सहास्य अभिमान और प्रसन्न उपेक्षा से मांज-मांजकर शब्दों को उसने मन ही मन उज्ज्वल और धार-दार बना लिया था। किन्तु विदाई के समय चारु के मुंह से कोई बात ही नहीं निकली। मात्र उससे इतना ही कहा गया, "चिट्ठी तो दिया करोगे न ?"

अमल ने ज़मीन से सिर लगाकर चारु को प्रणाम किया। चारु तेज़ी से भाग गई वहां से, और अपने कमरे में जाकर उसने भीतर से किवाड़ बन्द कर लिए।

१३

भूपति ने वर्धमान जाकर अमल का विवाह कर दिया, और फिर उसे विलायत रवाना करके वे घर लौट आए।

चारों तरफ से चोटें खा-खाकर विश्वासपरायण भूपति के मन में अब बाहरी संसार के प्रति एक तरह का वैराग्य-भाव आ गया था। अब उन्हें सभा-समिति और मिलना-जुलना कुछ भी अच्छा नहीं लगता। अब वे सोचते हैं, 'इन सब बातों में मैंने अपने को ही ठगा। मेरे जीवन के सुख के दिन व्यर्थ ही बीत गए, जीवन का सार-भाग मैंने घूरे में बहा दिया।' और फिर वे मन ही मन कहने लगते हैं, 'जाने दो। अखबार जाता रहा, अच्छा ही हुआ। मुक्त हो गया।' संध्या के समय अंधेरे का सूत्रपात देखते ही पक्षी जैसे अपने नीड़ या घोंसले को लौटता है, भूपति भी उसी तरह अपना बहुत दिनों का संचरण-क्षेत्र त्यागकर अन्तःपुर में चारु के पास लौट आए। मन ही मन उन्होंने निश्चय कर लिया कि 'बस, अब और कहीं नहीं जाना है; यही मेरी स्थिति है। जिस अखबारी जहाज़ को लेकर मैं दिन-भर खेला करता था वह डूब गया, अब घर का घर में आ गया, चलो छुट्टी हुई।'

भूपति के मन में शायद एक संस्कार-सा बैठा हुआ था कि 'अपनी स्त्री पर किसीको अधिकार नहीं जमाना पड़ता, स्त्री ध्रुवतारा की तरह अपना दीप आप ही

जलाए रखती है। वह दीप न तो हवा से बुझता है और न तेल की ही परवाह करता है।' बाहर जब टूट-फूट शुरू हुई थी तब भूपति के इतनी भी मन में न आई कि 'भीतर अन्तःपुर में भी कहीं कोई दरार पड़ी है या नहीं' ज़रा परख तो कर देखें।

शाम के वक्त भूपति वर्धमान से लौटे थे। झटपट मुंह-हाथ धोकर जल्दी से खा-पीकर निरचू हो गए। अमल के ब्याह और विलायत-यात्रा का आद्योपान्त वर्णन सुनने के लिए चारु स्वभावतः उत्सुक होगी, यह जानकर ही उन्होंने आज भीतर जाने में ज़रा भी देर नहीं की। सीधे सोने के कमरे में जाकर बिस्तर पर लेट गए; और हुक्के की लम्बी नली मुंह में लगाकर धुआं फेंकने लगे। किन्तु चारु अभी तक आई नहीं, शायद वह घर का काम-धन्धा कर रही होगी। इधर तमाखू जल जाने के बाद भूपति को नींद आने लगी। क्षण-क्षण में नींद उचट जाती, तो वे चौंककर उठ बैठते; और सोचते, अभी तक चारु आ क्यों नहीं रही है! अन्त में उनसे रहा नहीं गया। उन्होंने चारु को बुलवा भेजा।

चारु के आने पर भूपति ने पूछा, "आज इतनी देर क्यों कर ली?"

चारु ने कोई जवाबदेही न करके कहा, "हां, आज देर हो गई।"

भूपति चारु के आग्रहपूर्ण प्रश्न के लिए प्रतीक्षा

करते रहे, पर चारु ने कुछ पूछा ही नहीं। इससे वे कुछ दुःखित हुए। सोचने लगे, 'तो क्या चारु को अमल से स्नेह नहीं था ? अमल जब तक यहां मौजूद था तब तक चारु उसके साथ खूब हंसती-खेलती रही, और ज्योंही वह चला गया त्योंही उसके विषय में ऐसी उदासीनता !' ऐसे विपरीत व्यवहार से भूपति के मनमें खटका-सा हो गया। वे सोचने लगे, 'तो क्या चारु के हृदय में गहराई नहीं है ! वह सिर्फ हंसना-खेलना ही जानती है ! स्नेह-प्रेम कुछ भी नहीं कर सकती ! स्त्रियों के लिए ऐसा अनासक्ति का भाव अच्छा नहीं।'

चारु और अमल की मित्रता से भूपति को खुशी होती थी। इन दोनों का लड़कपन, कुट्टी और मेल, सलाह और खेल, उनके लिए कुतूहल की चीज़ थी। चारु जो अमल की हमेशा खातिरदारी किया करती थी उससे चारु की सुकोमल सहृदयता का परिचय पाकर भूपति मन ही मन प्रसन्न होते थे।

किन्तु आज वे आश्चर्य के साथ सोचने लगे, 'यह सब कुछ क्या ऊपरी बातें थीं ? हृदय में क्या उनकी कहीं कोई जड़ ही नहीं ?' और फिर उन्होंने सोचा, 'चारु के अगर हृदय नहीं, तो अब मैं कहां जाकर आश्रय लूं ?'

धीरे-धीरे परीक्षा करने के लिए भूपति ने बात छेड़ी, "चारु, तुम थीं तो अच्छी तरह, तबीयत तो खराब नहीं रही ?" चारु ने संक्षेप में उत्तर दिया, "नहीं, अच्छी ही

थी ।" भूपति ने कहा, "अमल का ब्याह तो हो गया..."

इतना कहकर वे चुप हो रहे। चारु ने समयोचित कोई बात कहने की कोशिश की, पर उसके मुंह से बात ही नहीं निकली। वह जड़वत् चुप बैठी रही।

भूपति का स्वभाव है कि वे किसी चीज़ को गौर के साथ नहीं देखते, किन्तु अमल की विदाई का दुःख उनके अपने मन में लगा हुआ था, इसलिए चारु की उदासीनता से उन्हें चोट पहुंची। उनकी इच्छा थी कि समवेदना से व्यथित चारु के साथ अमल की बातचीत करके हृदय का भार कुछ हल्का कर लें। उन्होंने कहा, "लड़की देखने में तो बहुत अच्छी है।...क्या चारु, सो रही हो क्या ?"

चारु बोली, "नहीं तो।"

भूपति ने कहा, "बेचारा अमल अकेला चला गया। जब रेल में बैठा तो वह बच्चे की तरह रोने लगा, देखकर इस बुढ़ापे में भी मैं अपने आंसू न रोक सका। डब्बे में दो अंगरेज़ बैठे थे, मर्दों को रोते देख वे मज़े लेने लगे।"

बत्ती बुझाकर पलंग के अंधेरे में पहले तो चारु करवट लेकर सो गई। उसके बाद अचानक जल्दी से बिस्तर से उठकर बाहर चली गई। भूपति ने चौंककर कहा, "आज तुम्हारी तबीयत कुछ खराब है क्या चारु ?"

कोई उत्तर न पाकर वे भी उठ बैठे। पास के बरामदे में दबे हुए रोने का शब्द सुनकर वे घबराए हुए बरामदे में पहुंचे। देखा तो, चारु वहां ज़मीन पर औंधी पड़-

कर अपने रोने को दबाने की कोशिश कर रही है ! चारु के ऐसे ज़बरदस्त शोकोच्छ्वास को देखकर भूपति दंग रह गए। सोचने लगे, 'चारु को क्या मैंने गलत समझा था ? चारु का स्वभाव इतना भीतरा कि मेरे आगे भी हृदय की कोई वेदना प्रकट नहीं करना चाहती ! जिनकी ऐसी प्रकृति है उनका प्रेम गहरा होता है और उनकी वेदना भी शायद बहुत ज़्यादा होती है।' भूपति ने मन ही मन विचारकर समझ लिया कि चारु का प्रेम साधारण स्त्रियों के समान बाहर देखने में नहीं आता। उन्होंने चारु के प्रेम का ऐसा उच्छ्वास पहले कभी नहीं देखा। आज वे खास तौर से समझ गए कि चारु के प्रेम का गुप्त फैलाव भीतर की ओर ही ज़्यादा है। भूपति खुद भी बाहर प्रकट करने में अपटु हैं, और इसलिए अपनी स्त्री की प्रकृति में भी हृदयावेग की गम्भीर अन्तःशीलता का परिचय पाकर उन्हें एक तरह की तृप्ति मालूम हुई।

भूपति चारु के पास बैठ गए, और कोई बात न करके धीरे-धीरे उसकी देह पर हाथ फेरने लगे। कैसे सान्त्वना दी जाती है, भूपति इस बात को नहीं जानते। वे इस बात को समझे ही नहीं कि शोक को जब कोई अंधेरे में गला दबाकर मार डालना चाहता है तब वहां किसी साक्षी का बैठा रहना उसे अच्छा नहीं लगता।

१४

भूपति ने जब अपने अखबार के काम से छुट्टी ली थी तब उन्होंने अपने मन में भविष्य का चित्र खींच लिया था। उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि वे किसी तरह की दुराशा या दुश्चेष्टा में नहीं फंसेंगे। चारु को लेकर पढ़ाने-लिखाने, लाड़-प्यार करने, प्रेम और प्रतिदिन के गार्हस्थिक कर्तव्य पालन करने में जीवन बिता देंगे। सोचा था कि 'जो गार्हस्थिक सुख सबसे सुलभ और साथ ही मधुर है, हमेशा हिलाने-डुलाने लायक और साथ ही पवित्र और निर्मल है, उसी सहज प्राप्य सुख से वे अपने जीवन-गृह के एक कोने में सान्ध्य दीप जलाकर एकान्त शान्ति की अवतारणा करेंगे।' हंसी-मज़ाक, गप-शप और आपस में मनोरंजन करना, इन सबमें ज़्यादा कोशिश की ज़रूरत नहीं और सुख भी काफी है। किन्तु काम पड़ने पर देखा गया कि वह सुख इतना सहज नहीं है। जिसे कीमत देकर नहीं खरीदना पड़ता वह अगर अपने हाथ के पास अपने आप न मिले, तो उसे फिर कहीं से भी किसी तरह ढूंढ़ निकालना मुश्किल है।

आखिर भूपति किसी भी तरह चारु के साथ घनिष्ठता नहीं जमा सके। इसके लिए उन्होंने अपने को ही दोषी ठहराया। सोचा कि बारह साल तक लगातार अखबार में लिखते-लिखते वे 'स्त्री के साथ कैसे बातचीत

या गपशप की जाती है' इस विद्या को ही भूल गए हैं। अब सांध्य दीप के जलते ही भूपति आग्रह के साथ घर आ जाते हैं। वे दो-एक बात करते हैं और चारु भी दो-एक बात करती है, किन्तु उसके बाद उनकी कुछ समझ में ही नहीं आता कि क्या करें। अपनी इस असमर्थता से स्त्री के सामने वे लज्जित होते रहते हैं। हाय, अपनी स्त्री के साथ गपशप करना जितना सहज समझ रखा था, मूढ़ पति के लिए वह उतना ही कठिन निकला! इससे तो सभा में व्याख्यान देना कहीं सहज है।

संध्या के बाद के जिस समय को उन्होंने हंसी-मज़ाक और लाड़-प्यार से रमणीय बना डालने की कल्पना की थी उस समय का काटना अब उनके लिए एक समस्या-सी हो गई। कुछ देर चेष्टा करने के बाद वे मौन रहकर सोचते कि उठकर चल दें; किन्तु उठके चले आने से चारु क्या सोचेगी, यह सोचकर वे उठ भी नहीं सकते। सहसा कह उठते, "चारु, ताश खेलोगी?" चारु और कोई उपाय न देखकर कहती, "हां।" और इच्छा न होते हुए भी ताश उठा लाती, और खेलने लगती। बार-बार गलतियां करके अन्त में वह हार जाती। उस खेल में किसीको भी कोई आनन्द नहीं आता।

भूपति ने बहुत सोच-विचार करके एक दिन चारु से पूछा, "चारु, मन्दा को बुला लिया जाए तो कैसा रहे? तुम बिलकुल अकेली पड़ गई हो।"

चारु मन्दा का नाम सुनते ही भक-से जल उठी। बोली, "नहीं, मन्दा की मुझे ज़रूरत नहीं।" सुनकर भूपति हंस दिए, और मन ही मन खुश भी हुए। सोचने लगे, सती-साध्वी स्त्रियां जहां सती-धर्म का ज़रा भी व्यतिक्रम देखती हैं वहां धीरज नहीं रख सकतीं।

विद्वेष के पहले धक्के को सम्हालकर चारु ने सोचा, 'मन्दा रहेगी तो शायद भूपति को वह बहुत कुछ प्रसन्न रख सकेगी।' और यह समझकर वह दुःखित हो रही थी कि पति उससे मानसिक सुख चाहते हैं और उससे वह किसी भी तरह देते नहीं बनता। उसके पति संसार की सब बातों को छोड़कर एकमात्र उसीसे अपने जीवन का सारा आनन्द आकर्षित करने की कोशिश कर रहे हैं, इस एकाग्र चेष्टा को देखकर और अपने हृदय की दीनता अनुभव करके वह एकाएक डर-सी गई। सोचने लगी, 'इस तरह से कैसे और कब तक दिन कटेंगे? वे और किसी चीज़ का सहारा क्यों नहीं लेते? और कोई अखबार क्यों नहीं निकाल देते?' असल में पति के मनोरंजन के लिए अब तक उसे कोई भी अभ्यास नहीं करना पड़ा, पति ने उससे कभी किसी तरह की सेवा ही नहीं चाही, किसी तरह का सुख भी नहीं चाहा; और न उन्होंने अपने लिए सब तरह से उसे कभी आवश्यक ही बनाया है। आज वे सहसा अपने जीवन की सम्पूर्ण आवश्यकताएं चारु से ही पूरी करना चाहते हैं! और ऐसी हालत में, चारु को अब

कहीं कुछ सुझाई नहीं देता। उसके पति को क्या चाहिए, क्या होने से उन्हें तृप्ति होगी, इस बात को वह ठीक तौर से जानती नहीं और जान भी जाए तो अब पूरा करना उसके बूते से बाहर की बात है।

भूपति अगर धीरे-धीरे आगे बढ़ते तो चारु के लिए शायद इतनी कठिनाई नहीं होती। किन्तु सहसा एक ही रात में दीवालिया होकर उन्होंने जो रीता भिक्षापात्र चारु के आगे बढ़ा दिया, उससे वह बड़े पसोपेश में पड़ गई। उसने कहा, "अच्छा, मन्दा को बुलवा लो। उसके आ जाने से तुम्हारी सेवा-टहल में बहुत कुछ सहूलियत हो जाएगी।" भूपति ने हंसकर कहा, "मेरी सेवा-टहल ! मेरे लिए और किसीकी कोई ज़रूरत नहीं, चारु !"

भूपति दुःखित होकर सोचने लगे, 'मैं बड़ा नीरस आदमी हूं, चारु को किसी तरह मैं सुखी नहीं कर पाता।' यह सोचकर उन्होंने साहित्य-चर्चा में मन लगाया। मित्रों में से कोई उनके घर आता, तो आश्चर्य के साथ देखता कि भूपति टेनिसन, बायरन, बंकिमचन्द्र आदि की रचनाओं में गले तक डूबे हुए हैं ! उनके इस अकाल काव्यानुराग को देखकर उनके मित्र खूब मज़ाक उड़ाने लगे। भूपति हंसके कहते, "अरे भई, बांस में भी फूल लगते हैं, पर कब लगते हैं इसका कोई ठीक नहीं !"

एक दिन शाम के वक्त भूपति ने अपने कमरे की बड़ी बत्ती जलाकर, बहुत ही संकोच के साथ, चारु से

कहा, "एक रचना पढ़के सुनाऊं ?" चारु ने कहा, "सुनाओ न !" भूपति ने कहा, "क्या सुनाऊं ?" चारु बोली, "जो तुम्हारी इच्छा हो।" स्त्री की तरफ से ज़्यादा आग्रह न देखकर भूपति का मन ज़रा दहल गया। फिर भी साहस लाकर बोले, "टेनिसन का अनुवाद करके तुम्हें सुनाता हूं।" चारु ने कहा, "सुनाओ।" किन्तु सब मिट्टी हो गया। संकोच और निरुत्साह से भूपति का पढ़ना अटकने लगा, समझाने के लिए ठीक-ठीक शब्द उपस्थित नहीं हुए। अंत में चारु की शून्य दृष्टि देखकर समझ गए कि उसका मन नहीं लग रहा है। उस दीपालोकित छोटे-से कमरे में, उस रात के एकान्त अवकाश में वैसा भराव आया ही नहीं जैसा आना चाहिए था।

भूपति से और भी दो-एक बार ऐसी गलतियां हुईं। और अन्त में फिर उन्होंने स्त्री के साथ साहित्य-चर्चा की कोशिश करना छोड़ ही दिया।

१५

कोई ज़बरदस्त चोट लगने से जैसे स्नायु सुन्न पड़ जाती है और शुरू-शुरू में दर्द मालूम ही नहीं होता वैसे ही शुरू-शुरू में अमल की कमी की चारु को मानो अनुभूति ही नहीं हुई, किन्तु बाद में ज्यों-ज्यों दिन बीतने लगे त्यों-त्यों अमल के अभाव में सांसारिक जीवन सी शून्यता मानो

क्रमशः बढ़ती ही चली गई, और इस निदारुण शून्यता का पता लगते ही चारु हतबुद्धि-सी हो गई। सोचने लगी, कुंजवन से निकलकर सहसा वह किस मरुभूमि में आ गई। दिन पर दिन बीतते जाते हैं और मरुभूमि का विस्तार बढ़ता ही जाता है। इस मरुभूमि का तो पहले उसे ज़रा भी ज्ञान न था। नींद उचटते ही सहसा उसकी छाती में धक-सी हो जाती, याद आ जाती, अमल नहीं है! सवेरे जब वह बरामदे में पान लगाने बैठती है तो क्षण-क्षण में मालूम होता रहता है कि अमल पीछे से नहीं आएगा। कभी-कभी अन्यमनस्क होकर वह ढेर के ढेर पान लगा डालती और फिर सहसा याद उठ आती कि ज़्यादा पान खानेवाला आदमी तो है ही नहीं। जब कभी भण्डारघर में पैर रखती, उसे याद आ जाता कि अमल के लिए कलेवा नहीं निकालना है। मन का अधैर्य अन्तः-पुर के सीमान्त में जाकर उसे याद दिला देता, आज अमल कालेज से नहीं आएगा। किसी नई पुस्तक की, किसी नई रचना की, किसी नई खबर या नये मज़ाक की किसीसे कोई आशा नहीं करना है। न कोई सिलाई का काम करना है, न कोई लेख लिखना है, और न कोई शौकीनी की चीज़ ही मंगवाकर रखना है।

चारु अपने इस असह्य कष्ट और चांचल्य से स्वयं विस्मित है। मनोवेदना के अविश्राम पीड़न से उसे भय होने लगा। बार-बार वह अपने-आप से पूछने लगी,

'क्यों मुझे इतना दुःख हो रहा है ? अमल मेरा ऐसा क्या लगता है जो उसके लिए इतना कष्ट सहूं ? मुझे हो क्या गया, इतने दिन बाद मुझे यह क्या हो गया ? नौकर-नौकरानी और रास्ते के मुटिया-मजूर तक निश्चिन्त होकर घूमते फिरते हैं, और मेरा ऐसा हाल क्यों ? भगवान ने मुझे ऐसी आफत में क्यों डाल दिया ?' इस तरह वह अपने मन से बार-बार प्रश्न किया करती, और आश्चर्य में उलझती रहती, किन्तु उसके दुःख में ज़रा भी कमी नहीं आती। अमल की स्मृति उसके अन्तरंग और बहिरंग में ऐसी परिव्याप्त हो गई है कि कहीं भी उसे भागे राह नहीं मिलती।

भूपति को अमल की स्मृति के आक्रमण से कहां तो उसकी रक्षा करनी चाहिए, सो तो नहीं, उलटे वह विच्छेद-व्यथित स्नेहशील मूढ़ बार-बार उसे अमल की ही बात याद दिला देता है। अन्त में चारु ने पतवार छोड़ दी, अपने से लड़ना उसने बन्द कर दिया और हार मानकर अपनी अवस्था को बिना विरोध के स्वीकार कर लिया। अमल की स्मृति को उसने आदर के साथ हृदय में प्रतिष्ठित कर लिया। क्रमशः ऐसा हो गया कि एकाग्रचित्त से अमल का ध्यान उसके लिए गोपन गर्व का विषय हो गया, अमल की स्मृति ही मानो उसके जीवन का श्रेष्ठ गर्व हो ! गृह-कार्य के अवकाश में उसने इसके लिए एक समय निश्चित कर लिया। उस समय में वह एकान्त कमरे

में, दरवाज़ा बन्द करके, अमल के साथ अपने जीवन की प्रत्येक घटना की याद किया करती। कभी तकिये पर औंधी पड़कर बार-बार कहती रहती, "अमल, अमल, अमल !" और समुद्र पार से मानो उसके कान में उत्तर आता, "भाभी, क्या है भाभी !" चारु अश्रुसिक्त आंखें मींचकर कहती, "अमल, तुम नाराज़ होकर चले क्यों गए ? मैंने तो कोई दोष नहीं किया। तुम यदि हंसी-खुशी से विदा होकर जाते तो शायद मैं इतना दुःख नहीं पाती।" अमल सामने होने से जैसे वह बात करती, ठीक उसी ढंग से वह कहती रहती, "अमल, मैं तुम्हें एक दिन के लिए भी नहीं भूली। एक दिन को भी नहीं, एक क्षण भी नहीं। मेरे जीवन में श्रेष्ठ वस्तुएं तो सब तुम्हींने पनपाई-खिलाई हैं। अपने जीवन के सार भाग से प्रतिदिन मैं तुम्हारी ही पूजा किया करूंगी।"

इस तरह चारु ने अपनी सम्पूर्ण घर-गृहस्थी के समस्त कर्तव्यों के अन्तःस्तर के नीचे सुरंग खोदकर उस निरालोक और निस्तब्ध अन्धकार में अश्रुमाला शोभित गोपन शोक का एक गुप्त मन्दिर बना लिया। वहां उसके पति या संसार के और किसीका कोई भी अधिकार नहीं रहा। वह स्थान जितना गोपनतम है उतना ही गम्भीरतम और उतना ही प्रियतम है। इसी मार्ग से वह संसार के सम्पूर्ण छद्मवेश को त्यागकर अपने अनावृत आत्म-स्वरूप में प्रवेश किया करती और वहां से बाहर निकलकर घर-संसार

का 'चेहरा' पहनकर फिर संसार के हास्यालाप और काम-धन्धे की रंगभूमि पर आ जाती।

१६

इस तरह, चारु ने अपने मन के साथ द्वन्द्व-विवाद छोड़कर अपने इस गम्भीर विषाद में भी एक प्रकार की शान्ति प्राप्त कर ली और साथ ही एकनिष्ठ होकर वह पति की भी भक्ति और सेवा करने लगी। भूपति जब सोते रहते तब वह धीरे-धीरे उनके पैरों के पास अपना सिर रखकर उनकी चरण-रज अपने सीमन्त में लगाती। पति की सेवा-सुश्रूषा और घर-गृहस्थी के काम में वह पति की लेशमात्र इच्छा को भी अधूरी न रखती। आश्रित और प्रतिपालित व्यक्तियों के प्रति किसी तरह की उपेक्षा होने पर भूपति दुःखित होते हैं, इस बात का ध्यान रखकर वह उस काम में कतई त्रुटि नहीं होने देती। इस तरह सब काम-काज पूरे करके वह पति का उच्छिष्ट प्रसाद खाकर दिन बिता देती।

इस सेवा-सुश्रूषा से भग्नश्री भूपति को मानो फिर से नवयौवन वापस मिल गया। स्त्री के साथ पहले मानो उनका नवविवाह नहीं हुआ था, मानो इतने दिन बाद हुआ। उन्होंने साज-सजावट और हास्य-परिहास से विकसित होकर संसार की समस्त दुश्चिन्ताओं को ढकेलकर

एक किनारे कर दिया। बीमारी से उठने के बाद जैसे भूख बढ़ जाती है और शरीर में भोग-शक्ति के विकास की सचेतनता अनुभव होने लगती है ठीक वैसे ही भूपति के मन में भी इतने दिन बाद एक अपूर्व और प्रबल भावावेश का संचार हुआ। मित्रों से, यहां तक कि चारु से भी छिपाकर वे कविता पढ़ने लगे; और मन ही मन कहने लगे, 'अखबार बन्द करके अनेक कष्ट उठाकर इतने दिन बाद मैंने अपनी स्त्री को पाया है।'

एक दिन भूपति ने चारु से कहा, "चारु, आजकल तुमने लिखना क्यों छोड़ दिया?" चारु ने कहा, "मैं तो बड़ा लिखना जानती हूं!"

भूपति ने कहा, "सच कहता हूं, चारु, मैं तो आजकल के किसी भी लेखक को तुम्हरी जैसी भाषा लिखते नहीं देखता! 'विश्वबन्धु' ने जो लिखा था, मेरा मत भी ठीक वही है।" चारु बोली, "बस, रहने भी दो!"

भूपति 'यह देखो न' कहकर 'सरोरुह' का एक अंक निकालकर चारु और अमल की भाषा की तुलना करने लगे। चारु का चेहरा सुर्ख हो उठा, उसने भूपति के हाथ से 'सरोरुह' छीनकर आंचल के भीतर छिपा लिया। भूपति ने मन ही मन सोचा, 'जब तक लिखने का साथी कोई न हो तब तक लिखना होता ही नहीं। ठहरो, मुझे भी लिखने का अभ्यास करना होगा। फिर धीरे-धीरे चारु को भी लिखने का उत्साह होने लगेगा।' और फिर

वे अत्यन्त गोपनता के साथ लेख लिखने का अभ्यास करने लगे। 'कोश' देखकर, बार-बार काट-कूटकर और बार-बार नकल करके वे अपने बेकार अवस्था के दिन बिताने लगे। क्योंकि इतने कष्ट और इतनी कोशिशों से उन्हें लिखना पड़ रहा है इसलिए अपनी रचनाओं पर क्रमशः उनका विश्वास और ममत्व बढ़ने लगा। इसके बाद एक दिन उन्होंने अपनी एक रचना, किसी और से नकल करवाकर, चारु के हाथ में दी, और हंसते हुए कहा, "मेरे एक मित्र ने हाल ही में लिखना शुरू किया है। मैं तो कुछ समझता नहीं, तुम एक बार पढ़के देखो तो सही, कैसा लिखा है।" और चारु के हाथ में कापी देकर वे भय, शंका और आवेग लिए हुए बाहर चले गए। सरलचित्त भूपति के इस छल को चारु फौरन ताड़ गई।

चारु 'कापी' उलट-पुलटकर पढ़ने लगी; और लिखने का ढंग और विषय देखकर ज़रा हंस दी। फिर सोचने लगी, पति की भक्ति करने के लिए वह इतना आयोजन कर रही है, फिर क्यों वे ऐसा लड़कपन करके उसके अर्घ्य को बखेर देते हैं? उसके मुंह से वाहवाही सुनने के लिए इतना ऊधम क्यों? वे यदि कुछ भी न करते, उसके मन को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए यदि वे सर्वदा प्रयास न करते रहते, तो पति की पूजा करना उसके लिए सहज साध्य होता। वह चाहती है कि भूपति किसी भी अंश में अपने को उससे छोटा न करें।

चारु ने 'कापी' को मोड़कर मुट्ठी में दबा लिया और तकिया के सहारे बैठकर दूर देखती हुई बहुत देर तक न जाने क्या-क्या सोचती रही ! अमल भी इसी तरह उसे अपनी नई रचना पढ़ने के लिए दिया करता था।

सन्ध्या के बाद उत्सुक भूपति शयन-घर के सामने-वाले बरामदे में फूलों के टब देखने लगे, चारु से कोई बात पूछने का उन्हें साहस नहीं हुआ। अन्त में चारु को ही बात करनी पड़ी, "यह क्या तुम्हारे मित्र की पहली रचना है ?" भूपति ने कहा, "हां।" भूपति अत्यन्त प्रसन्न होकर सोचने लगे, 'अब इस बेनामी रचना पर अपना नाम जारी कैसे किया जाए ?' इसके बाद भूपति की कापियां बहुत जल्दी-जल्दी भरने लगीं ; और नाम प्रकट होने में भी देर नहीं लगी।

१७

विलायत से चिट्ठी आने का कौन-सा दिन है, इस बात का चारु हमेशा ध्यान रखने लगी। पहले अदन से भूपति के नाम एक चिट्ठी आई। उसमें अमल ने 'भाभी' को प्रणाम लिखा। स्वेज़ से भी अमल की चिट्ठी आई, उसमें भी उसने 'भाभी' को प्रणाम लिखा। माल्टा से जो चिट्ठी आई उसमें भी 'भाभी' के लिए प्रणाम लिखा आया। किन्तु चारु को अपने नाम की अमल की एक भी चिट्ठी नहीं मिली।

आखिर चारु ने भूपति से सब चिट्ठियां लेकर उन्हें बार-बार उलट-पुलटकर पढ़ देखा। किन्तु प्रणाम के सिवा उनमें और कहीं भी कोई आभास तक उसके लिए नहीं था।

इधर कुछ दिनों से चारु ने जिस शान्त विषाद के चंदोए के नीचे आश्रय लिया था, अमल की उपेक्षा से वह बिलकुल छिन्न-भिन्न हो गया। उसके हृदय के भीतर फिर एक तरह का घात-प्रतिघात शुरू हो गया; और उसकी गार्हस्थिक कर्तव्य स्थिति में फिर भूकम्प की-सी हलचल जारी हो गई।

अब भूपति किसी-किसी दिन आधी रात को उठके देखते हैं कि चारु बिस्तर पर नहीं है! इधर-उधर देखने पर पता लगता है कि वह दक्षिण की खुली खिड़की के पास बैठी है। भूपति को देखते ही चारु चट से उठकर कहने लगती है, "आज बड़ी गर्मी है, इसीसे ज़रा हवा में आ बैठी हूं।"

इससे भूपति उद्विग्न हो उठे। उन्होंने पलंग के ऊपर पंखा खिचवाने का इन्तज़ाम करा दिया, और साथ ही चारु के स्वास्थ्य बिगड़ने की आशंका से हमेशा चारु पर दृष्टि रखने लगे। चारु हंसकर कहा करती, "मैं बड़े मज़े में हूं, क्यों तुम झूठ-मूठ की इतनी फिक्र किया करते हो!" इतनी-सी हंसी खिलाने के लिए चारु को अपने हृदय की सारी शक्ति लगा देनी पड़ती।

अमल विलायत पहुंच गया। चारु ने सोचा था कि रास्ते में उसके लिए अलग चिट्ठी लिखने का अमल को शायद काफी मौका नहीं मिला होगा, विलायत पहुंचकर वह उसे लम्बी चिट्ठी देगा। अमल तो पहुंच गया, किन्तु उसकी वह 'लम्बी चिट्ठी' नहीं आई तो नहीं ही आई।

प्रत्येक विलायती डाक आने के दिन चारु अपने समस्त काम-काज और बातचीत के भीतर ही भीतर फड़-फड़ाती रहती। कहीं भूपति यह न कह दें कि तुम्हारे नाम की कोई चिट्ठी नहीं, इस आशंका से भूपति से चिट्ठी के विषय में कुछ पूछने की भी उसे हिम्मत नहीं पड़ती।

एक दिन, चारु के मन की ऐसी विचित्र हालत में, विलायती डाक आने के दिन भूपति धीरे-धीरे भीतर आए, और मन्द-मन्द मुस्कराते हुए बोले, "एक चीज़ लाया हूं, देखोगी ?" चारु पुलकित होकर चौंक पड़ी, और अत्यन्त व्यस्तता के साथ बोली, "कहां है देखूं।"

भूपति 'चीज़' न दिखाकर हास-परिहास करके नव दाम्पत्य सुख का रस लेने की कोशिश करते रहे; और चारु अधीर होकर भूपति के दुपट्टे के भीतर से अपनी वांछित वस्तु छीन लेने की कोशिश करती हुई मन ही मन सोचने लगी, 'सवेरे से ही मेरा मन बोल रहा था कि आज मेरी चिट्ठी आएगी ही, सो क्या कभी व्यर्थ हो सकता है!' भूपति की परिहास-स्पृहा क्रमशः बढ़ने लगी, वे उसे चालू रखने के लिए पलंग के चारों तरफ घूमने लगे और चारु

उनका पीछा करने लगी। अंत में थक जाने पर चारु नाराज़ होकर पलंग पर बैठ गई, और उसकी आंखों में आंसू भर आए। स्त्री के इस प्रबल आग्रह से भूपति बहुत खुश हुए। और अन्त में दुपट्टे के भीतर से अपनी रचना की कापी निकालकर चट से चारु की गोद में रखकर बोले, "नाराज़ न होओ, यह लो!"

१८

यद्यपि अमल ने भूपति को लिख दिया था कि पढ़ने-लिखने में लगे रहने से बहुत दिनों तक उसे चिट्ठी लिखने का समय नहीं मिलेगा, किन्तु फिर भी दो-एक डाक से अमल की कोई चिट्ठी न आने से चारु के लिए घर-गृहस्थी कंटक-शय्या हो उठी। संध्या के बाद भूपति के भीतर आने पर बातों ही बातों में चारु ने बहुत ही उदास होकर शान्त स्वर में पति से कहा, "विलायत को एक तार देकर खबर मंगा लो न कि अमल कैसे है।" भूपति ने कहा, "अभी दो सप्ताह पहले उसकी चिट्ठी आ चुकी है कि अब पढ़ने-लिखने में व्यस्त रहेगा।"

चारु ने कहा, "अच्छा, तो जाने दो। मैंने सोचा था कि आखिर परदेश है, शायद बीमार-ईमार पड़ गए हों! कोई ठीक थोड़े ही है!" भूपति बोले, "सो बात नहीं, बीमार पड़ता तो खबर भिजवा देता। तार भेजने में

खरचा भी तो कम नहीं!" चारु ने कहा, "खरचा बहुत ज़्यादा लगता है क्या ? मैं समझती थी कि ज़्यादा से ज़्यादा एक या दो रुपया लगता होगा।" भूपति ने कहा, "नहीं, नहीं करीब सौ रुपये का धक्का समझो !" चारु ने कहा, "तब तो मुश्किल ही है।"

दो दिन बाद चारु ने भूपति से कहा, "मेरी बहन अभी चुंचड़ा में है, तुम वहां जाकर उसकी खबर-सुध ले आओ तो बहुत अच्छा हो।" भूपति ने पूछा, "क्यों, वे बीमार हैं क्यों ?" चारु ने कहा, "नहीं, बीमार तो नहीं है। तुम तो जानते हो, तुम्हारे जाने से उन लोगों को कितनी खुशी होती है !"

भूपति चारु के अनुरोध से घोड़ागाड़ी पर सवार होकर हावड़ा स्टेशन चल दिए। रास्ते में बैलगाड़ियों की कतार लगी हुई थी, जिससे उनकी गाड़ी बहुत देर तक रुकी रही। इतने में, एक परिचित टेलीग्राफ-पियून उधर से जा रहा था, उसने भूपति को देखकर उनके नाम का एक टेलिग्राम उनके हाथ में दे दिया। विलायती टेलिग्राम देखकर भूपति एकाएक डर गए। सोचा, अमल शायद बीमार पड़ गया। डरते-डरते उन्होंने तार खोलकर देखा, उसमें लिखा था, "मैं सकुशल हूं।" इसके क्या मानी ? उलट-पुलट के देखा तो मालूम हुआ वह 'प्री-पेड टेलिग्राम' का जवाब है !

हावड़ा जाना नहीं हुआ। गाड़ी वापस लौटाकर

भूपति ने घर आकर स्त्री के हाथ में तार दे दिया। भूपति के हाथ में तार देखते ही चारु का चेहरा सफेद-फक पड़ गया। भूपति ने कहा, "इसके मानी मेरी कुछ समझ में नहीं आए !"

अनुसंधान करने के बाद भूपति को उसके मानी समझ में आ गए। चारु ने अपना एक गहना गिरवी रखकर उन रुपयों से जवाबी तार भेजा था। भूपति सोचने लगे, 'इतना करने की कोई ज़रूरत ही नहीं थी। मुझसे ज़रा-सा ज़्यादा अनुरोध करती, तो मैं ही तार भेज देता। नौकर के हाथ से इस तरह छिपाकर बाज़ार में गहना गिरवी रखने भेजना, यह तो कोई अच्छी बात नहीं !' और रह-रहकर बार-बार उनके मन में केवल यही प्रश्न उठने लगा, 'चारु ने क्यों इतनी ज़्यादती की ?' एक अस्पष्ट सन्देह अज्ञात रूप से उनके हृदय में चुभने लगा। और उस सन्देह को भूपति ने प्रत्यक्ष रूप से देखना नहीं चाहा, बल्कि भूले रहने की कोशिश की; किन्तु वेदना ने किसी भी तरह उनका पीछा नहीं छोड़ा।

१९

अमल की तबीयत अच्छी है, फिर भी वह चिट्ठी नहीं लिखता। आखिर ऐसी कठोरता के साथ सम्बन्ध-विच्छेद क्यों हुआ ? चारु का जी चाहता है कि वह खुद जाकर

एक बार रूबरू इस प्रश्न का उत्तर ले आवे। किन्तु बीच में समुद्र है, पार होने का कोई रास्ता नहीं। निष्ठुर विच्छेद है, निरुपाय विच्छेद! सब प्रश्न और समस्त प्रतिकारों के बाहर का विच्छेद है यह! चारु स्वयं को सम्हालकर स्थिर न रख सकी। घर का काम-काज पड़ा रहने लगा, सभी काम में उससे गलतियां होने लगीं, नौकर-चाकर चोरी करने लगे, उसके दीन-भाव को देखकर सब कानाफूसी करने लगे; और इतना सब कुछ होते हुए भी उसे होश नहीं आया। और होते-होते ऐसा हो गया कि अचानक वह चौंक-चौंक उठती, बात करते-करते ज़रा रो आने के लिए उसे उठकर एकान्त में जाना पड़ता, यहां तक कि अमल का ज़िक्र सुनते ही उसका चेहरा फक पड़ जाता।

आखिर भूपति से यह सब कुछ छिपा न रहा। और जो बात उन्होंने एक क्षण के लिए भी कभी नहीं सोचा थी वह भी सोचनी पड़ी। संसार उनके लिए बिलकुल शुष्क और जीर्ण वृद्ध-सा हो गया।

बीच में जो कुछ दिन के लिए आनन्द के उन्मेष में भूपति अन्धे हो गए थे उन दिनों की स्मृति उन्हें लज्जित करने लगी। जो अनभिज्ञ वानर रत्न नहीं पहचानता उसे क्या झूठा पत्थर देकर इस तरह ठगना चाहिए था? चारु की जिन बातों से, जिस प्रेम और व्यवहार से, भूपति अब तक फूले-फूले फिरते थे वे सब बातें याद आ-आकर

उन्हें 'मूढ़, मूढ़, मूढ़' कह-कहके बेंत मारने लगीं।

अन्त में, जब उन्हें बहुत परिश्रम से लिखी हुई अपनी रचनाओं का ध्यान आया, तो उन्होंने धरणी को विदीर्ण होने के लिए कहा। अंकुश-ताड़ित हस्ती की तरह वे जल्दी-जल्दी चारु के पास पहुंचे, और बोले, "मेरी वे कापियां कहां हैं ?" चारु ने कहा, "मेरे पास रखी हैं।" भूपति ने कहा, "ला दो उन्हें।" चारु उस समय भूपति के लिए मटर की कचौड़ियां बना रही थी, बोली, "अभी तुरत चाहिए ?" भूपति ने कहा, "हां, अभी तुरत।"

चारु कड़ाही उतारकर आलमारी में से कापियां और कागज़ निकाल लाई। भूपति ने अधीरता के साथ उसके हाथ से कापियां छीनकर चूल्हे में डाल दीं। चारु जल्दी से उन्हें निकालने की कोशिश करती हुई बोली, "यह क्या किया !"

भूपति ने उसका हाथ पकड़कर गरजते हुए कहा, "बस, रहने दो।"

चारु विस्मित होकर खड़ी रही। भूपति की समस्त रचनाएं जलकर भस्म हो गईं। चारु समझ गई। उसने एक गहरी सांस ली; और कचौड़ी बनाना छोड़कर धीरे-धीरे अन्यत्र चली गई।

चारु के सामने अपनी रचनाएं नष्ट कर डालने का भूपति का इरादा नहीं था। किन्तु, ठीक सामने ही अंगीठी जल रही थी, और उसे देखकर कैसा तो उनके सर पर

खून सवार हो गया ! अपने को वे सम्हाल नहीं सके। प्रवंचित निर्बोध पति के सम्पूर्ण उद्यम को उन्होंने प्रवंचना-कारिणी स्त्री के सामने ही आग में डाल दिया। जब सब जलकर भस्म हो गया तब उनकी आकस्मिक उग्रता कुछ शान्त हुई। और तब उन्हें खयाल आया कि चारु अपने अपराधों का बोझ लेकर कैसे गम्भीर विषाद से चुपचाप सिर झुकाए चली गई ! फिर जो सामने देखा तो वे सोचने लगे, 'मुझे मटर की कचौड़ियां अच्छी लगती हैं, इसीसे चारु अपने हाथ से इतने जतन से कचौड़ियां बना रही थी।'

भूपति बरामदे में जाकर रेलिंग पर झुकके खड़े हो गए और मन ही मन सोचने लगे, 'मेरे लिए चारु की ये जो अश्रान्त चेष्टाएं हैं, ये जो वंचनाएं हैं, इससे बढ़कर करुणाजनक बात संसार में और क्या होगी ? ये सब वंचनाएं तो केवल छलनाकारिणी हेय छलना-मात्र नहीं हैं, इन छलनाओं के लिए अभागिनी को अपने विदीर्ण हृदय की क्षत यन्त्रणा को चौगुना बढ़ाकर इतने दिनों से क्षण-क्षण में अपने हृत्पिण्ड से न जाने कितना रक्त निचोड़ के निकालना पड़ा होगा !' और फिर वे मन ही मन कहने लगे, 'हाय री अबला, हाय री दुःखिनी नारी ! कोई ज़रूरत नहीं थी, मुझे इन सबकी कोई ज़रूरत नहीं थी। इतने दिनों से प्रेम न मिलने पर भी 'नहीं मिला' कहकर मैंने कभी कोई शिकायत नहीं की। मेरे दिन तो

केवल लेख लिखने और प्रूफ देखने में ही बीत रहे थे, मेरे लिए इतना सब करने की कोई ज़रूरत नहीं थी।'

तब फिर भूपति अपने जीवन को चारु के जीवन से दूर हटाकर, डाक्टर जैसे असाध्य रोगग्रस्त रोगी को देखता है वैसे, निःसम्पर्क व्यक्ति की तरह उसे दूर से देखने लगे। देखने लगे, उस क्षीण शक्ति नारी का हृदय प्रबल संसार द्वारा चारों तरफ से किस तरह आक्रान्त हो रहा है ! ऐसा कोई आदमी नहीं जिसके आगे वह अपनी सब बातें कह सके, ऐसी कोई बात नहीं जो शब्दों में कही जा सके, ऐसा कोई स्थान नहीं जहां वह सम्पूर्ण हृदय खोल-कर हाहाकर करके अपना हृदय हलका कर सके, फिर भी इस नारी को अप्रकाश्य अपरिहार्य अप्रतिविधेय प्रति-क्षण-पुंजीभूत दुःख भार को वहन करते हुए अत्यन्त सहज साधारण स्त्रियों के समान, अपनी स्वस्थ चित्त पड़ोसिनों की तरह अपनी घर-गृहस्थी का काम-धन्धा करना पड़ रहा है !

भूपति ने अपने सोने के कमरे में जाकर देखा, जंगले की छड़ पकड़े चारु सूखी आंखों से एकटक बाहर की ओर देख रही है। धीरे से वे उसके पीछे जाकर खड़े हो गए, कुछ बोले नहीं, केवल उसके माथे पर हाथ रखकर रह गए।

२०

मित्रों ने भूपति से पूछा, "बात क्या है? आज इतने व्यस्त कैसे?"

भूपति ने कहा, "एक अखबार···"

एक मित्र बीच ही में बोल उठे, "फिर अखबार! अपना घर-द्वार सब कुछ अखबार की रद्दी में मोड़के गंगा में बहा देने का ही निश्चय कर लिया है क्या?" भूपति ने कहा, "नहीं, मैं खुद नहीं निकाल रहा।"

मित्र ने पूछा, "तो कौन निकाल रहा है?" भूपति ने कहा, "मैसूर से एक नया पत्र निकलेगा, मुझे उसका सम्पादक बनाया गया है।"

मित्र ने कहा, "तो घर-द्वार सब छोड़-छाड़कर एकदम मैसूर चले जाओगे! चारु भी साथ जाएंगी क्या?" भूपति ने कहा, "नहीं। मामा वगैरह सब यहीं आकर रहेंगे।"

मित्र ने कहा, "आखिर 'सम्पादकी' का नशा तुम्हारा छूटा ही नहीं किसी कदर, आश्चर्य है!" भूपति बोले, "आखिर आदमी ही ठहरा भाई, आदमी के लिए एक न एक नशा तो चाहिए ही। बिना नशे के वह जी कैसे सकता है!"

विदाई के समय चारु ने पूछा, "अब आओगे कब?"

भूपति ने कहा, "जब तुम्हें अकेलापन मालूम हो, मुझे लिखना, मैं चला आऊंगा।"

विदा लेकर भूपति दरवाज़े के पास पहुंचे ही थे कि चारु ने सहसा दौड़कर भूपति का हाथ पकड़के कहा, "मुझे भी साथ लेते चलो। यहां मुझे अकेली न छोड़ जाओ!"

भूपति ठिठककर खड़े हो गए; और चारु के मुंह की तरफ देखते रहे। मुट्ठी ढीली हो जाने से भूपति के हाथ पर से चारु का हाथ खुल गया। भूपति चारु के पास से हटकर बरामदे में जा खड़े हुए।

अब भूपति को समझने में देर न लगी कि अमल के विच्छेद की स्मृति जिस घर को चारों तरफ से घेरे हुए ग्रस रही है उस घर को चारु दावानल-ग्रस्त वन की हरिणी की तरह छोड़कर भागना चाहती है! वे मन ही मन कहने लगे, 'किन्तु मेरे विषय में इसने एक बार भी नहीं सोचा कि मैं कहां भागकर जाऊं! जो स्त्री हृदय में निरन्तर दूसरे का ध्यान करती रहती है, परदेश जाकर भी मुझे उसे भूलने की छुट्टी नहीं मिलेगी! निर्जन बन्धु-हीन प्रवास में भी प्रतिदिन मुझे उसका साथ देना पड़ेगा! दिन-भर परिश्रम करके सन्ध्या के समय जब मैं घर लौटूंगा तब उस घर में निस्तब्ध शोकाकुल नारी के साथ मेरी वे सन्ध्याएं कैसी भयानक हो उठेंगी! जिसके हृदय के भीतर मृतक का भार है उसे अपने हृदय के पास बांधे

रखना, यह मैं कब तक कर सकूंगा ? और भी आखिर कितने वर्षों तक प्रतिदिन मुझे इस तरह जीना पड़ेगा ? जो आश्रय-नीड़ टूट-फूटकर चूर्ण-विचूर्ण हो चुका है उसके ईंट-पत्थर-लकड़ियों के कूड़े-कबाड़े को जहां का तहां पड़ा छोड़कर भी नहीं जा सकता मैं ! उस बोझ को सर पर लादकर ले जाना पड़ेगा मुझे ?'

भूपति ने चारु के पास आकर कहा, "नहीं, अब मुझसे यह नहीं होगा।"

क्षण-मात्र में चारु का सम्पूर्ण रक्त नीचे उतर गया, उसका चेहरा कागज़-सा सफेद और शुष्क हो गया, वह पलंग की पाटी पकड़कर उसके सहारे किसी कदर खड़ी रही।

भूपति ने उसी क्षण कहा, "चलो, चारु, मेरे साथ ही चलो।"

चारु ने कहा, "नहीं, रहने दो।"

◇ ◇ ◇

मुद्रक : हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली 2-66-2-5

हमारे कुछ उत्कृष्ट प्रकाशन

भूल : **गुरुदत्त**
वनवासी ,,
ममता ,,
मैं न मानूं ,,
परिवर्तन ,,
आभा : **आचार्य चतुरसेन**
धर्मपुत्र ,,
पतिता ,,
मोती ,,
हृदय की परख ,,
हृदय की प्यास ,,
वासना के स्वर : **उपेन्द्रनाथ 'अश्क'**
तारा **यशपाल**
शोले : **भैरवप्रसाद गुप्त**
बड़े सरकार ,,
मंज़िल ,,
रम्भा ,,
पापी **रांगेय राघव**
तेलुगु की श्रेष्ठ कहानियां : **अनु० बालशौरि रेड्डी**
स्वप्नमयी : **विष्णु प्रभाकर**
पत्थर की नाव : **मन्मथनाथ गुप्त**
अमिता : **हंसराज 'रहबर'**
फागुन के दिन चार : **'उग्र'**
बुधुआ की बेटी ,,
त्यागपत्र : **जैनेन्द्रकुमार**
अलविदा : **जयन्त वाचस्पति**
डूबते मस्तूल : **नरेश मेहता**
लौटे हुए मुसाफिर : **कमलेश्वर**
तीसरा आदमी ,,
सोया हुआ सपना : **राजेन्द्र अवस्थी**
जाड़े की धूप : **रजनी पनिकर**
अन्तिम परिचय : **शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय**
सूखा पत्ता : **अमरकान्त**
पराई डाल का पंछी ,,
एक घिसा हुआ चेहरा : **रमेश बक्षी**
मिस मसूरी : **रामप्रकाश कपूर**
हम सब गुनहगार : **राधाकृष्ण प्रसाद**
एक छाया और मैं : **मोहन चोपड़ा**
रीता : **प्रतापनारायण टंडन**
डाक्टर देव : **अमृता प्रीतम**
नीना ,,
अशू ,,
बन्द दरवाज़ा ,,
हीरे की कनी ,,
रंग का पत्ता ,,
एक सवाल ,,
नागमणि ,,
धरती, सागर और सीपियां ,,

एक गधे की वापसी : कृश्न चन्दर
गद्दार ,,
प्यास ,,
एक गधे की आत्मकथा ,,
फिल्मी फुलझड़ियां ,,
सपनों का क़ैदी ,,
शहीद : मुल्कराज आनन्द
एक चादर मैली सी : राजेन्द्रसिंह बेदी
जयमाला : शैलेश मटियानी
वसुन्धरा ,,
दुर्गेशनन्दिनी : बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय
आनंदमठ ,,
रजनी ,,
विषवृक्ष ,,
इन्दिरा ,,
कपालकुण्डला ,,
दो बहनें : रवीन्द्रनाथ ठाकुर
जुदाई की शाम ,,
बहूरानी ,,
काबुलीवाला ,,
गोरा ,,
आंख की किरकिरी ,,
कुमुदिनी ,,
घर और बाहर ,,

मिलन : रवीन्द्रनाथ ठाकुर
चार अध्याय ,,
उजड़ा घर ,,
नीरजा ,,
देवदास : शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय
चरित्रहीन ,,
दत्ता ,,
शेष प्रश्न ,,
बिराज बहू ,,
गृहदाह ,,
मंझली दीदी : बड़ी [illegible] ,,
श्रीकांत ,,
चन्द्रनाथ ,,
परिणीता ,,
शुभदा ,,
पथ के दावेदार ,,
ब्राह्मण की बेटी ,,
विप्रदास ,,
लेन-देन ,,
ज़मीन आस्मान : पर्ल बक
प्रेम या वासना : टॉल्सटॉय
मैली चांदनी : गुलशन नन्दा
मौत की छाया : कॉनन डायल
जुआरी : दॉस्तावस्की
एक मछुआ : एक मोती
जॉन स्टेनबेक

प्रत्येक पुस्तक का मूल्य एक रुपया